जैव धर्म - द्वितीय खण्ड

अध्याय-13 प्रमाण विचार और प्रमेय प्रारम्भ

आम्नाय: प्राह तत्वं हरिमिह परमं सर्वशक्तिं रसाब्धिम्
तद्भिन्नांशाश्च जीवान् प्रकृति कवलितान् तद्विमुक्तांश्च भावाद्
भेदाभेद प्रकाशं सकलमपि हरे: साधनं शुद्ध भक्तिम्
साध्यं तत् प्रीतिमेवेत्युपदिशति जनान् गौरचन्द्र! स्वयं स: ।

गुरु परम्परा द्वारा प्राप्त वेद-वाणियों को आम्नाय कहते हैं वेद और पुराणों को प्रमाण माना गया है। इन्हें शब्द प्रमाण कहते हैं इन प्रमाणोंसे सिद्ध है कि —

1) हरि ही परम तत्व हैं।
2) वे सर्वशक्तिमान हैं
3) वे अखिल रसामृत-सिन्धु हैं
4) मुक्त और बद्ध जीव उनके विभिन्नांश तत्व हैं
5) बद्ध जीव माया के अधीन होते हैं
6) मुक्त जीव माया से मुक्त होते हैं
7) चित्-अचित् जगत श्रीहरि का भेदाभेद प्रकाश है।
8) शुद्ध भक्ति ही एकमात्र साधन है।
9) कृष्ण प्रीति ही साध्य वस्तु है।

महाप्रभु ने जीवों के लिये 10 प्रकार के तत्वों का उपदेश किया है। उसमें पहला प्रमाण तथा शेष 9 प्रमेय हैं। प्रमेयको 3 भागों में विभक्त किया गया-

प्रमेय (2-10)
- सम्बन्ध तत्व (2-8 श्लोक)
- अभिधेय तत्व (9वां श्लोक) - साधन
- प्रयोजन तत्व (10वां श्लोक) - साध्य

शास्त्रों में 10 प्रकार के प्रमाण बताये हैं →
① प्रत्यक्ष ② अनुमान ③ आर्ष ④ उपमान ⑤ अर्थापत्ति ⑥ अभाव ⑦ सम्भव ⑧ ऐतिह्य ⑨ चेष्टा ⑩ शब्द

* इनमें से केवल शब्द प्रमाण ही मान्य है क्योंकि यह स्वयं भगवान से प्रकट है।

प्रमेय → प्रमाण के द्वारा जिस विषय को सिद्ध किया जाता है उसे प्रमेय कहते हैं। दशमूल के 2-10 श्लोक प्रमेय के अन्तर्गत हैं

दशमूल-1 → स्वत: सिद्धो वेदो हरिदयितवेध: प्रभृतित:
प्रमाणं सत् प्राप्तं प्रमिति विषयान् तान्नव विधान्
तथा प्रत्यक्षादि प्रमितिसहितं साधयति न:
न युक्तिस्तर्काख्या प्रविशति तथा शक्तिरहिता।

ब्रह्मा आदि के द्वारा, गुरु परम्परा क्रम से सम्प्रदाय में जो स्वत: सिद्ध वेद पाये जाते हैं उन्हें "आम्नाय वाक्य" कहते हैं। ये आम्नाय वाक्य 9 प्रमेय तत्वों को सिद्ध करते हैं। जिस युक्ति का तात्पर्य केवल तर्क है, वैसी युक्ति अचिन्त्य विषयों (भगवत् सम्बन्धी) में कार्य नहीं करती।

आम्नाय वाक्य → 1) सत् सम्प्रदाय के आचार्यों ने जिन-जिन वेद-ग्रन्थों को प्रमाण माना है, वे सब आम्नाय हैं। उदा० → वेद, गीता, भागवत आदि।

2) दशमूल तत्व श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षा होने के कारण भगवत्-वाणी है अत: यह भी आम्नाय हैं।

3) 11 सात्विक उपनिषद → ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर उपनिषद।

4) जैव धर्म, भक्तिरसामृत सिन्धु आदि वैष्णव आचार्यों के ग्रन्थ भी आम्नाय के अन्तर्गत हैं क्योंकि ये भगवान के नित्य परिकरों द्वारा प्रकाशित हैं।

* प्रक्षिप्त अंश → समय-2 पर कुछ असत् व्यक्ति अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिये वेदों में अध्याय, मण्डल और मन्त्र जोड देते हैं इन बादमें जोड़े हुये अंशों को 'प्रक्षिप्त अंश' कहते हैं। इनको आम्नाय नहीं माना जा सकता।

Q→ ब्रह्माने शिष्य परम्पराके द्वारा शिक्षा दी है, इसका वेदमें कोई प्रमाण है?

Ans→ मुण्डकोपनिषदमें कहते हैं →

ब्रह्मा देवानां प्रथम: सम्बभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठां अथर्वाय ज्येष्ठ पुत्राय प्राह।

सम्पूर्ण जगतके रचयिता तथा सबकी रक्षा करने वाले ब्रह्माजी समस्त देवताओं से पहले प्रकट हुये और अपने बड़े पुत्र अथर्वा को समस्त विद्याओंकी आधारभूता ब्रह्मविद्या का भलीभाँति उपदेश किया।

श्रीमद्भागवत में भगवान ने कहा है →

कालेन नष्टा प्रलये वाणीयं वेदसंज्ञिता
मयादौ ब्रह्मणे प्रोक्ता धर्मो यस्यां मदात्मक : ।

वेद वाणी समयके फेर से लुप्त हो गई थी। फिर ब्रह्माके कल्पके आरम्भमें मैंने उसे ब्रह्माको उपदेश किया।

Ques) सम्प्रदाय बनाने की आवश्यकता क्यों हुई ?

Ans) संसारमें अधिकतर लोग मायावादका आश्रयकर भक्तिपथ से रहित कुपथ पर चलते हैं। यदि शुद्ध भक्तों का कोई अलग सम्प्रदाय न हो तो सत्संग मिलना दुर्लभ हो जायेगा, इसलिये पद्मपुराणमें कहा गया है →

सम्प्रदायविहीना ये मन्त्रास्ते विफला मता :
अत : कलौ भविष्यन्ति चत्वार : सम्प्रदायिन : ।
श्रीब्रह्मारुद्रसनका वैष्णवा : क्षितिपावना :
चत्वारस्ते कलौ भाव्या ह्युत्कले पुरुषमोत्तमात् ।
रामानुजं श्री : स्वीचक्रे मध्वाचार्य : चतुर्मुख :
श्रीविष्णुस्वामिनं रुद्रो निम्बादित्यं चतु : सन ।

इन सम्प्रदायोंमें वेद आदि ग्रन्थ प्राचीनकालसे जिस रूपमें हैं, उसमें कुछ परिवर्तन अथवा अंश प्रक्षिप्त होनेकी सम्भावना नहीं है। अत : इन ग्रन्थोंमें संदेहकी आवश्यकता नहीं है। साधु-सन्तों में सत् सम्प्रदायकी व्यवस्था प्राचीनकाल से चली आ रही है। इनमें से ब्रह्म-सम्प्रदाय सबसे प्राचीन है।

प्रस्थानत्रयी → किसी सम्प्रदायको प्रामाणिक तभी माना जाता है जब उस सम्प्रदाय की गीता, उपनिषद एवं ब्रह्मसूत्र के ऊपर टीका लिखी गई हो। इन तीनों को प्रस्थानत्रयी कहते हैं।

Ques) चित् विषयमें युक्तिका प्रवेश नहीं है, इसका वेदमें क्या प्रमाण है ?

Ans) ब्रह्मसूत्र के अनुसार → " तर्काप्रतिष्ठानात् " अर्थात् 'तर्क की प्रतिष्ठा नहीं है।' तर्कके द्वारा कोई वस्तु स्थापित नहींकी जा सकती

करता है, कल उससे अधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति उसका खण्डन करके अपना तर्क स्थापित कर देता है। इसलिये हमारे आचार्यों ने 'शब्द' प्रमाण ही स्वीकार किया है। अन्य सब प्रमाण यदि स्वतः सिद्ध वेद-प्रमाण के अन्तर्गत हैं तो मान्य हैं अन्यथा परित्यज्य हैं। महाभारत में भी कहा गया है →

अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तर्केण योजयेत्
प्रकृतिभ्यः परं यत्तु तदचिन्त्यस्य लक्षणम्। (भीष्म पर्व → 5/12)

प्रकृति से अतीत तत्व समूह अचिन्त्य होते हैं। तर्क प्राकृत विषयों में ही लागू होते हैं क्योंकि वह स्वतः प्रकृति के अन्तर्गत हैं। तर्क बुद्धि से उत्पन्न हैं और बुद्धि जड़ है अतः तर्क कभी भी प्रकृति से अतीत तत्व को स्पर्श भी नहीं कर सकता। इसलिये अचिन्त्य विषयों में (भगवत-सम्बन्धी) शुष्क तर्क व्यर्थ है।

दशमूल श्लोक - २ →

हरिस्त्वेकं तत्वं विधिशिवसुरेशप्रणमित:
यदेवेदं ब्रह्म प्रकृतिरहितं तत्वनुमह:
परात्मा तस्यांशो जगदनुगतो विश्वजनक:
स वै राधाकान्तो नवजलदकान्तिश्चिदुदय:।

ब्रह्मा, शिव आदि देवता जिनको निरन्तर प्रणाम करते हैं, वे हरि ही एकमात्र परमतत्व हैं। शक्तिरहित निर्विशेष ब्रह्म उन श्रीहरि की अंगकांति है। जगत की सृष्टि कर उसमें अपने एक अंश से प्रविष्ट रहने वाले अन्तर्यामी परम-पुरुष परमात्मा उन श्रीहरि के अंशमात्र हैं। वे श्रीहरि नव-जलधर-कान्ति से युक्त चित् स्वरूप श्रीश्रीराधावल्लभ हैं

Quest उपनिषदों में ब्रह्म को ही सर्वश्रेष्ठ तत्व बताया गया है। श्रीगौरहरि ने किस प्रमाण के आधार पर उस ब्रह्म को श्रीहरि की अंगज्योति बताया ?

Ans विष्णु पुराण में कहा है →

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः
ज्ञान वैराग्योश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना। (विष्णु पुराण → 6/5/74)

सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण वीर्य, सम्पूर्ण यश, सम्पूर्ण श्री (सौन्दर्य), सम्पूर्ण ज्ञान

और सम्पूर्ण वैराग्य - इन 6 अचिन्त्य गुणों से युक्त परमतत्व ही भगवान हैं। इन 6 गुणों में अङ्ग और अंगी का सम्बन्ध है।

अङ्गी → जिसमें अन्य अङ्गों का समावेश होता है। अङ्गी गुण में शेष गुण समूह अङ्ग के रूप में रहते हैं। उदा० → वृक्ष अङ्गी है, उसकी डाल, पत्ते, फूल आदि अङ्ग हैं। इसी प्रकार शरीर अङ्गी है, हाथ व पैर उसके अङ्ग हैं।

* इसी प्रकार भगवान के चिन्मय-विग्रह की श्री (रूप) अङ्गी है तथा ऐश्वर्य, वीर्य और यश - ये तीन गुण अङ्ग हैं।
* ज्ञान और वैराग्य स्वयं गुण नहीं हैं ये गुण के गुण हैं। ये यश नामक गुण के गुण हैं। यही ज्ञान और वैराग्य निर्विशेष निराकार ब्रह्म का स्वरूप है।

ब्रह्म → निर्विकार, निष्क्रिय, अवयव रहित निर्विशेष ब्रह्म स्वतन्त्र सिद्ध तत्व न होकर भगवान के श्री विग्रह का आश्रित तत्व, उनकी अङ्ग कांति है। अर्थात् यह वस्तु नहीं वस्तु का गुण है। उदा० → अग्नि का प्रकाश स्वतः सिद्ध तत्व नहीं बल्कि अग्नि के अधीन एक गुण मात्र है।
* ज्ञान और वैराग्य का कोई आकार नहीं होता अतः ब्रह्म भी निराकार है।

परमात्मा → गीता में भगवान कहते हैं →

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः।

क्षर (जीव) और अक्षर (ब्रह्म) से श्रेष्ठ एक अन्य पुरुष है जिसे परमात्मा कहते हैं। जो तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर समस्त जगत का पालन करते हैं।

भगवान का प्रत्येक अंश ही पूर्ण हैं इसलिये उपनिषद में कहा है →

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते। (बृहदारण्यक उपनिषद → 5/1)

अवतारी पुरुष पूर्ण हैं। उनसे निकलने वाले अवतार भी पूर्ण हैं। पूर्ण से पूर्ण ही आविर्भूत होता है। पूर्ण से पूर्ण निकाल लेने पर पूर्ण ही अवशेष रहता

है। परमेश्वर की पूर्णतामें कोई कमी नहीं आती।

सात्वत तन्त्र के अनुसार- विष्णुके 3 रूप हैं

विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथो विदुः
एकं तु महतः स्रष्टृ द्वितीयं त्वण्डसंस्थितम्
तृतीयं सर्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते।

1) कारणोदशायी विष्णु → चित और मायिक जगत के बीचमें कारण समुद्र (विरजा) है। इसी कारण समुद्रमें कारणोदशायी विष्णु शयन करते हैं तथा दूर स्थित माया के प्रति ईक्षण करते हैं और माया के द्वारा मायिक जगतकी रचना कराते हैं। वेदों में कहा है →

"स ऐक्षत" (ऐतरीय उपनिषद → 1/1/1) अर्थात् उस परमात्माने ईक्षण किया।

2) गर्भोदशायी विष्णु → कारणोदशायी विष्णु (महाविष्णु) अपने एक अंशसे प्रत्येक ब्रह्माण्ड में प्रविष्ट हो जाते हैं इनको गर्भोदशायी विष्णु कहते हैं। इनकी नाभिसे कमल प्रकट होता है जिससे ब्रह्माकी उत्पत्ति होती है। इसी नाभिकमल में 14 लोकों की कल्पना की गई है।

3) क्षीरोदशायी विष्णु → गर्भोदशायी विष्णु अपने एक अंशसे समस्त जीवोंके हृदय में क्षीरोदशायी विष्णुके रूप में स्थित हैं। इनका आकार अँगूठे के बराबर है। इनको हिरण्यगर्भ ईश्वर या परमात्मा भी कहते हैं। इनके लिये ही उपनिषदमें कहा गया है →

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति।

एक डाल पर 2 पक्षी बैठे हैं (शरीर रूपी वृक्ष) जिसमें एक पक्षी सुख-दुख रूपी फल का आस्वादन कर रहा है और दूसरा उसको देख रहा है। यही परमात्मा कर्मफल दाता है और जीव कर्मफल भोक्ता है।

Q→ श्रीहरि ही स्वयं कृष्ण हैं- इसका क्या प्रमाण है ?

Ans 1) भगवान ऐश्वर्य और माधुर्य- २ रूपोंमें नित्य प्रकाशित हैं। नारायण ऐश्वर्य प्रकाश हैं जो महाविष्णुके अंशी और परव्योम- वैकुण्ठके पति हैं। श्रीकृष्ण माधुर्य प्रकाश हैं, उनमें माधुर्य इतना अधिक है कि उसके आगे ऐश्वर्य ढका रहता है।

सिद्धान्ततस्त्वभेदेऽपि श्रीश- कृष्णस्वरूपयो :
रसेनोत्कृष्यते कृष्णरूपमेषा रसस्थिति : ।

सिद्धान्त रूप से कृष्ण और नारायण में कोई भेद नहीं है परन्तु रस दृष्टि से कृष्ण श्रेष्ठ हैं।

2) श्रीकृष्ण ही स्वयं भगवान हैं इसका प्रमाण वेद, उपनिषद और पुराण हैं।

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम्
स सध्रीची : । स विषुचीर्वसान आवरीवर्ति भुवनेष्वन्त : । (ऋग्वेद)

गोपवंश में उत्पन्न एक बालकको देखा, जिसका कभी भी पतन नहीं है। वह कभी अत्यन्त निकट और कभी दूर नाना पथों में विचरण करता है। कभी- २ वह विभिन्न वस्त्रों से सुसज्जित रहता है तो कभी एक रंगके वस्त्रोंसे। इस प्रकार वह बारम्बार अपनी प्रकट और अप्रकट लीलाको प्रकाशित करता है।

3) श्रीमद्भागवतमें व्यासदेवने भगवान के सारे अवतारों का वर्णन करने के पश्चात कहा →

"एते चांशकला पुंस : कृष्णस्तु भगवान स्वयम्।"

राम, नृसिंह, वामन आदि अवतार समूह पुरुष (महाविष्णु) के अंश या कला हैं परन्तु कृष्ण स्वयं भगवान (अवतारी) हैं।

4) गीतामें भगवानने कहा है →

"मत्त : परतरं नान्यत् किञ्चदस्ति धनञ्जय"

मुझसे श्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है।

Q→ कृष्ण का आकार तो मनुष्यके समान है फिर वो सर्वव्यापी कैसे हो सकते हैं ?



Ans) हमारी बुद्धि जड़ है और जड़ बुद्धि चिन्मय तत्वको स्पर्श नहीं कर सकती। यह बुद्धि कभी भी परमतत्व तक नहीं पहुँच सकती। नारद पंचरात्रमें श्रीविग्रहके विषयमें कहा है →

निर्दोषगुणविग्रह आत्मतन्त्रो निश्चेतनात्मकशरीरगुणैश्च हीन:
आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि: सर्वत्रच स्वगतभेदविवर्जितात्मा।

श्रीकृष्णका विग्रह सच्चिदानंदमय है। इसमें जड़ीय गुणों का गन्ध तक नहीं है। जड़ जगतमें निराकार वस्तु (जैसे- आकाश) ही सर्वव्यापी हो सकती है परन्तु चित् जगतमें सभी वस्तुएँ, सभी धर्म असीम हैं। आकारयुक्त श्रीविग्रह भी सर्वव्यापी हैं यही सर्वव्यापकता का गुण श्रीविग्रह का अलौकिक धर्म है। भगवानके धामकी प्रत्येक वस्तु (जल, मिट्टी, वृक्ष, आकाश, सूर्य, चन्द्र आदि) चिन्मय है। वहाँ जड़ दोष नहीं हैं। हम लोग मायाबद्ध होनेके कारण चिन्मय धाम का अनुभव नहीं कर सकते, परन्तु जब भक्तों की कृपासे भजन करते-2 हृदयमें चित् भाव उदित होगा तब हमें चिन्मय व्रज धामके दर्शन होंगे। उदा० → सनातन गोस्वामी की कृपासे अकबर को चिन्मय व्रजधाम के दर्शन हुये।

Que कृष्ण जब अपने चिन्मय धाम के साथ तथा परिकरोंके साथ इस जगतमें आते हैं, तो संसारी लोग उस स्वप्रकाश विग्रहके सच्चिदानंद दर्शन क्यों नहीं करते ?

Ans भगवान के अनन्त गुणों में 'भक्तवात्सल्य' गुण प्रधान है। इसी गुणसे द्रवित होकर भगवान अपने भक्तोंको एक चिन्मय शक्ति प्रदान करते हैं जिससे कि उनके भक्त उनके भगवत्-स्वरूप तथा उनकी चिन्मय लीलाका साक्षात् दर्शन करते हैं। अभक्तों के नेत्र और इन्द्रियाँ मायिक (जड़) हैं इसलिये वे भगवान के दर्शन नहीं कर पाते। अभक्तजन उसे साधारण मानव चरित्र जैसा दर्शन करते हैं। गीतामें भगवान ने कहा है →

नाहं प्रकाश: सर्वस्य योगमायासमावृत:
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्। (गीता → 7/25)

किन्तु फिरभी भगवानकी कृपासे इन लोगोंकी सुकृति बनती है। वही सुकृति आगे चलकर कृष्णके प्रति श्रद्धा उत्पन्न कर देती है। अत: भगवानके अवतार ग्रहण करनेसे समस्त जगत का कल्याण होता है।



Q) ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, सूर्य, गणेश आदि देवताओं की वास्तविक स्थिति क्या है?

Ans) 1) भगवान कृष्ण में नारायण के 60 गुणों से 4 गुण अधिक - अर्थात् 64 गुण हैं। ये 4 गुण हैं → रूपमाधुरी, प्रेम माधुरी, लीलामाधुरी, वेणुमाधुरी। नारायण में 60 गुण पूर्ण मात्रा में पूर्ण चित् रूप में हैं।

2) 55 गुण देवताओं (ब्रह्मा, शिव) में पाये जाते हैं। इनमें जीव के 50 गुणों के अतिरिक्त 5 अन्य गुण पाये जाते हैं जोकि आंशिक मात्रा में होते हैं।

3) जीवों में 50 गुण आंशिक रूप में पाये जाते हैं। सारे देवी-देवता भगवान के आंशिक गुणों से युक्त हैं तथा संसार चलाने के लिये भगवान ने इनको विशेष अधिकार प्रदान किये हैं। इसलिये देवता भी जीवों के लिये उपास्य स्वरूप हैं। इनकी कभी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। ये जीवों के गुरु स्वरूप हैं परन्तु इनको स्वतन्त्र भगवान मानना अपराध है। पद्मपुराण में कहा है →

हरिरेव सदाराध्य: सर्वदेवेश्वरेश्वर:
इतरे ब्रह्मरुद्राद्या नावज्ञेया कदाचन।

अध्याय- 14
प्रमेयके अन्तर्गत शक्ति विचार

दशमूल श्लोक - 3

परारव्याया: शक्तेरपृथगपि स स्वे महिमनि
स्थितो जीवाख्यां स्वामचिदभिहितां तां त्रिपदिकाम्
स्वतन्त्रेच्छ: शक्तिं सकलविषये प्रेरणपरो
विकाराद्यै: शून्य: परम- पुरुषोऽयं विजयते।

अपनी अचिन्त्य परा-शक्ति से अभिन्न होते हुये भी भगवान स्वतन्त्र इच्छामय हैं। वे चित् शक्ति, जीव शक्ति और माया शक्ति को समस्त विषयों में प्रेरणा प्रदान करते हैं। ऐसा करते हुये भी स्वयं निर्विकार रहकर अपने पूर्ण स्वरूप में नित्य विराजमान रहते हैं।

वेदों में कहा गया है →

न तस्य कार्यं करणञ्च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते
परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च। (श्वे० → 6/8)

इन परब्रह्म की कोई क्रिया प्राकृत नहीं है क्योंकि उनकी इन्द्रियाँ अप्राकृत हैं। वे अप्राकृत शरीरसे एक ही समयमें सब जगह विराजमान रहते हैं। इनसे बड़ा तो दूर, कोई उनके समान भी नहीं है। उनकी शक्ति कई प्रकारकी है जिन ज्ञान शक्ति, बल शक्ति और क्रिया शक्ति प्रमुख हैं। इनको सम्वित् शक्ति, सन्धिनी शक्ति और ह्लादिनी शक्ति भी कहते हैं।

वेदान्त सूत्र के अनुसार → "शक्ति शक्तिमतोरभेद:" अर्थात् शक्ति और शक्तिमान में कोई भेद नहीं है।
शक्तिके द्वारा ही कोई कार्य सम्पन्न होता है अत: किसी कार्य से उसकी शक्ति का परिचय प्राप्त होता है। परन्तु कार्य करने की इच्छा शक्तिमान की होती है। जड़ जगत - मायाशक्ति, जीव जगत - जीव शक्ति एवं चित जगत - चित शक्ति का कार्य है। इन तीनों शक्तियों को भगवान अपने-2 कार्यों में प्रवृत्त होने की प्रेरणा प्रदान करते हैं, परन्तु स्वयं इन कार्यों में लिप्त नहीं होते, स्वयं निर्विकार रहते हैं।

Ques- स्वेच्छामय होना तो विकार है फिर भगवान निर्विकार कैसे हैं?
Ans- निर्विकार का तात्पर्य मायिक विकार से शून्य होना। माया - स्वरूप शक्ति की छाया है। माया का कार्य सत्य होने पर भी अनित्य है। अत: भगवानमें मायाका विकार नहीं है। उनमें इच्छा और विलासरूप जो विकार होता है, वह चिन्मय प्रे

विकास है। उसे जड़ीय भाव स्पर्श नहीं कर सकते। भगवानकी लीला आदि चित् जगतके कार्योंसे मायाका कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु जिनकी बुद्धि मायिक है, वे चित् जगतकी लीलाओं को मायिक ही समझते हैं। उदा० → पीलिया के रोगी को सब कुछ पीला ही दिखाई देता है।

** माया शक्ति चित शक्तिकी छाया है। अत: चित जगतमें जो विचित्रता है, वे मायाके कार्यों में भी दिखाई देती हैं परन्तु मायिक जगतमें वह सब विकृत स्वरूप में है। ये अशुद्ध और छायामात्र है। बाहरसे समान दिखने पर भी ये एक दूसरे के विपरीत हैं। उदा० → शीसेमें देखने पर मनुष्य और उसका प्रतिबिंब समान दिखाई पड़ता है परन्तु सूक्ष्म दृष्टिसे दोनों विपरीत हैं। बायें अंग दायीं ओर और दायें अंग बायीं ओर दिखाई पड़ते हैं। मायिक विचित्रता चित जगत का 'विकृत-प्रतिफलन' है।

Ques) श्रीमती राधिका कृष्णकी कौनसी शक्ति हैं?

Ans) कृष्ण पूर्ण शक्तिमान हैं राधा उनकी पूर्ण शक्ति हैं। उन्हें पूर्ण स्वरूप शक्ति भी कहते हैं। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति अपृथक् हैं उसी प्रकार राधा और कृष्ण नित्य लीलारस आस्वादनमें पृथक् होते हुये भी सदा अपृथक हैं।
स्वरूप शक्ति (श्रीमती राधिका) की 3 क्रिया शक्ति हैं →

1) चित् शक्ति (अन्तरङ्गा शक्ति)
2) जीव शक्ति (तटस्था शक्ति)
3) माया शक्ति (बहिरङ्गा शक्ति)

* स्वरूप शक्तिके सभी नित्य गुण चित् शक्तिमें पूर्ण मात्रामें, जीव शक्तिमें अणुमात्रामें, मायाशक्तिमें विकृत रूप में प्रकाशित होते हैं।

स्वरूप शक्तिकी 3 वृत्ति हैं →
1) ह्लादिनी (आनन्द) 2) सन्धिनी (सत्ता) 3) सम्वित् (ज्ञान)

दशमूल- 4 →

स वै ह्लादिन्याया: प्रणयविकृतेर्ह्लादनरत
स्तथा सम्विच्छक्ति प्रकटितरहो भावरसित:
तया श्रीसन्धिन्या कृतविशद तद्धामनिचये
रसाम्भोधौ मग्नो व्रजरसविलासी विजयते।

स्वरूप शक्ति की 3 वृत्ति हैं - ह्लादिनी, सन्धिनी और सम्वित। ह्लादिनी के प्रणय विकार में कृष्ण सदा अनुरक्त रहते हैं। सम्वित शक्ति द्वारा प्रकटित अन्तरङ्ग भावों द्वारा वे रसिक स्वभाव हैं। सन्धिनी शक्ति द्वारा प्रकटित वृन्दावन आदि धामोंमें स्वेच्छामय व्रजरसविलासी कृष्ण नित्य रससमुद्र में निमग्न रहते हैं।

① चित् शक्ति → (a) ह्लादिनी वृत्ति → स्वरूप शक्तिकी ह्लादिनी वृत्ति श्रीमती राधिकाके रूपमें कृष्णको पूर्ण चिन्मय आनन्द प्रदान करती हैं। वे अपने कायव्यूह स्वरूप 8 प्रकारके भावोंको अष्टसखी और 4 प्रकारके सेवाभावोंको प्रियसखी, नर्मसखी, प्राणसखी, परमप्रेष्ठ सखीके रूपमें नित्य प्रकटित रखती हैं। ये सब व्रजकी नित्य सिद्ध सखियाँ हैं।

(b) सन्धिनी वृत्ति → चित् शक्तिकी सन्धिनी वृत्ति द्वारा व्रजके ग्राम, वन, उपवन, गिरि-गोवर्धन, सखी, सखा, गोधन आदिके चिन्मय शरीर और लीला-विलास के समस्त प्रकारके उपकरण प्रकाशित होते हैं। चित् धाम में प्रत्येक वस्तुकी सत्ता सन्धिनी वृत्तिके द्वारा प्रकाशित होती है।

(c) सम्वित वृत्ति → चित् जगतमें स्थित समस्त प्रकार का ज्ञान सम्वित् वृत्तिके द्वारा प्रकाशित होता है। कृष्ण सम्वित् वृत्तिके द्वारा प्रकटित भिन्न-२ भावोंसे युक्त होकर प्रणय-रसका आस्वादन करते हैं। वंशी बजाकर गोपियों को आकर्षित करना, गोचारण, रास आदि लीला- ये सभी कार्य सम्वित् वृत्ति द्वारा किये जाते हैं।

② जीव शक्ति → यह स्वरूप शक्ति की अणु शक्ति है।
(a) ह्लादिनी वृत्ति → इसके द्वारा जीवको ब्रह्मानंद प्राप्त होता है।
(b) सम्वित् वृत्ति → इसके द्वारा ब्रह्म ज्ञान होता है।
(c) सन्धिनी वृत्ति → इसके द्वारा अणु चैतन्य जीव की सत्ता प्रकाशित होती है।

③ माया शक्ति → यह स्वरूप शक्तिकी छाया है।
(a) ह्लादिनी वृत्ति → इसके द्वारा आहार, निद्रा, मैथुन आदि जड़ आनन्द प्राप्त होते हैं।
(b) सम्वित् वृत्ति → इसके द्वारा सांसारिक जड़ ज्ञान होता है।
(c) सन्धिनी वृत्ति → इसके द्वारा जड़ ब्रह्माण्ड तथा जड़ ब्रह्माण्डमें प्रत्येक वस्तुकी सत्ता प्रकाशित होती है।

Q→ यदि शक्तिके समस्त कार्य चिन्तनीय हैं तो उसे अचिन्त्य क्यों कहते हैं?

Ans→ कृष्णकी शक्ति ऐसी प्रभावयुक्त होती है कि वह चित् जगतमें सम्पूर्ण विरुद्ध धर्मों को एक समय एक साथ प्रकाशित कर देती है।

उदा० → कृष्ण रूपवान होते हुये भी निराकार हैं। सर्वव्यापक होते हुये भी मूर्तिमान हैं। अजन्मा होते हुये भी नन्दनन्दन हैं। सर्वाराध्य होते हुये भी गोपकुमार हैं। असीम और ससीम एक साथ हैं। निर्विकार रहते हुये भी गोपियोंके मानसे भयभीत हैं। यही कृष्ण की शक्तिका अचिन्त्यत्व है।

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्। (श्वे०→3/19)

वे परमात्मा प्राकृत हाथ-पैर से रहित होकर भी अप्राकृत हाथसे सब ग्रहण करते हैं। अप्राकृत पैरों से सर्वत्र गमन करते हैं। प्राकृत नेत्र और कानोंसे रहित होकर भी सब देखते और सुनते हैं। वे जो भी जानने वाली वस्तु हैं, उन सबको जानते हैं परन्तु उनकी इच्छाके बिना उन्हें कोई नहीं जान सकता। ब्रह्मविद् उनको आदि पुरुष और समस्त कारणोंके कारण महान पुरुष मानते हैं।

Q→ भगवानको रस समुद्र कहते हैं, वेदोंमें इसका कोई प्रमाण है?

Ans→ तैत्तिरीय उपनिषद के अनुसार →

"यद्वैतत्सुकृतम्। रसो वै सः।"

जिसे सुकृत ब्रह्म कहा गया है, वे परब्रह्म परमात्मा ही रस स्वरूप हैं।

Q→ यदि वे रस स्वरूप हैं, तो बहिर्मुख लोग उन्हें क्यों नहीं देख पाते?

Ans→ मायाबद्ध जीव की 2 स्थिति होती हैं →

पराक् स्थिति → इसमें जीव कृष्ण से विमुख होता है। वह केवल मायिक विषयों का चिन्तन और दर्शन करता है। अतः वह कृष्णका सौन्दर्य दर्शन नहीं कर सकता।

प्रत्यक् स्थिति → इसमें जीव मायासे विमुख एवं कृष्णोन्मुख होता है। अतः वह कृष्णके रस स्वरूप का दर्शन करनेमे समर्थ होता है।

Q.1 भगवानको किस उपायसे देखा जा सकता है?

Ans.1 श्रीमद्भागवतमें ब्रह्माजी ने भगवानकी स्तुति करते हुये कहा है →

अथापि ते देव पदाम्बुजद्वयप्रसादलेशानुगृहीत एव हि ।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् । (भा० 10/14/29)

जो व्यक्ति आपके चरणकमलों की तनिक भी कृपा प्राप्त कर लेता है, वही आपकी महिमा को जान सकता है। दूसरा कोई ज्ञान-वैराग्य आदि साधनोंके द्वारा बहुत समय तक अनुसंधान करने पर भी आपकी महिमा को यथार्थ रूपमें नहीं जान सकता।

Ques.1 तान्त्रिक ब्राह्मणगण शिवशक्तिको दुर्गा क्यों कहते हैं?

Ans.1 मायाशक्ति ही शिव शक्ति है। इस मायाके 3 गुण हैं- सत, रज, तम। भगवानकी स्वरूप शक्तिकी छायाका नामही 'मायाशक्ति' है। वह पृथक् रूपसे कोई शक्ति नहीं है। माया ही जीवोंके बन्धन और मोक्ष का कारण है। कृष्णसे विमुख होने पर माया जीवको संसार बन्धनमें डालकर दण्ड प्रदान करती है। कृष्णके प्रति उन्मुख होने पर वही माया सत्वगुण का प्रकाशकर जीवको कृष्ण सम्बन्धी ज्ञान प्रदानकर उसे कृष्ण प्रेम का अधिकारी बनाती है। मायिक गुणों से बंधे हुये जीव मायाके शुद्ध स्वरूप (स्वरूप शक्ति) को देखने में असमर्थ रहते हैं अतः वे छाया शक्तिको ही माया मान लेते हैं। वे माया द्वारा मोहित होकर कुसिद्धान्तों को स्वीकार कर लेते हैं।

Ques.1 गोकुल उपासनामें दुर्गादेवीकी गणना पार्षदोंमें की गई है, ये दुर्गा कौन हैं?

Ans.1 गोकुलकी दुर्गा ही योगमाया हैं। उन्हीं योगमायाका विकार जड़ माया है। योगमाया भगवान की चित् शक्ति हैं। योगमाया भगवान की समस्त लीलाओं को पूर्ण करती हैं। भगवानने गीतामें कहा है →

"नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः"

अर्थात् मैं योगमायाके द्वारा आवृत होनेके कारण सबके लिये प्रकाशित नहीं होता। भगवान और उनके परिकरों पर जड़ मायाका कोई प्रभाव नहीं होता, वहाँ योगमायाका प्रभाव रहता है। जड़ माया का प्रभाव जड़ ब्रह्माण्ड तक ही सीमित है। जड़ माया योगमाया शक्तिकी सेविका है।

Ques.1 वैष्णव नवद्वीप धामको श्रीधाम क्यों कहते हैं?

Ans.1 श्री नवद्वीपधाम और श्रीवृन्दावनधाम दोनों अभिन्न तत्त्व हैं। नवद्वीपमें मायापुर सर्वश्रेष्ठ है। व्रजमें जो स्थान गोकुलका है, नवद्वीपमें वही मायापुर का है। मायापुर नवद्वीपधाम

का महायोगपीठ है। कलियुगमे नवद्वीपके समान कोई तीर्थ नही है। जो इसधामकी चिन्मयता प्राप्त कर लेता है, वही व्रज रसका अधिकारी है। बाहरसे नवद्वीप और व्रज दोनों प्रपञ्चमय दिखाई देते हैं।
नवद्वीप की परिधि 16 कोसकी है। इसका आकार अष्टदलकमल के समान है। सीमन्तद्वीप, गोद्रुमद्वीप, मध्य द्वीप, कोल द्वीप, ऋतु द्वीप, जह्नु द्वीप, मोदद्रुम द्वीप, रुद्र द्वीप - ये आठ द्वीप आठ दल हैं। इनके बीच में अन्तर्द्वीप के अन्तर्गत श्रीमायापुर है। मायापुरके मध्य भागमें महायोगपीठ रूप श्रीजगन्नाथमिश्र का भवन है। मायापुरमे भजन करने से शीघ्र कृष्णप्रेम की सिद्धि होती है।

* गोलोक, वृन्दावन और श्वेतद्वीप ये तीनों परव्योम के अन्तःपुर हैं। गोलोकमे कृष्ण की स्वकीया लीला, वृन्दावनमें पारकीया, श्वेतद्वीपमें उसी लीलाकी परिशिष्ट लीला होती है। इनमें तत्वगत कोई भेद नहीं है।
नवद्वीप वस्तुतः श्वेतद्वीप होकर भी वृन्दावनसे अभिन्न है। वृन्दावनमें जो रस अप्रकाशित है, वही अप्रकाशित रस नवद्वीप धाम में परिशिष्ट रूपमें प्रकाशित है।

Ques→ गौरलीला क्या स्वरूप शक्ति का कार्य है ?
Ans→ श्रीकृष्ण और गौराङ्ग देव में कोई भेद नहीं है। श्रील रूपगोस्वामी के अनुसार →
राधाकृष्ण प्रणयविकृति र्ह्लादिनी शक्तिरस्मादेकात्मानावपि भुवि पुरा देह भेदं गतौ तौ चैतन्याख्यं प्रकटमधुना तद्द्वयं चैक्यमाप्तं राधाभावद्युतिसुवलितं नौमि कृष्ण स्वरूपम्।

राधा कृष्णकी प्रणय विकृति रूप हैं। वह ह्लादिनी शक्ति हैं। राधा और कृष्ण एक होते हुये भी विलास तत्वकी नित्यता हेतु गोलोक वृन्दावनमें अलग-२ देह धारण कर विद्यमान हैं। कलियुगमें वे दोनों मिलकर एक स्वरूपमें चैतन्य नामसे प्रकट हुये हैं। ऐसे राधा भाव एवं राधा-अंगकांति युक्त कृष्ण स्वरूप गौराङ्ग देव को मैं प्रणाम करता हूँ।

Ques→ गौराङ्ग का युगल कैसे होता है ?
Ans→ 1) अर्चन मार्ग में गौर-विष्णुप्रिया की पूजा होती है। लोग विष्णु प्रियाको भू-शक्ति भी कहते हैं। वे भक्ति स्वरूपिणी हैं। नवद्वीप जैसे नवधा भक्ति का स्वरूप है, उसी प्रकार विष्णुप्रिया भी नवधा भक्ति का स्वरूप है।

२) भजन मार्ग में गौर-गदाधर की पूजा होती है।

शक्ति और शक्तिमान अभेद हैं →

1) कृष्णका नाम, रूप, गुण, लीला सब शक्तिका परिचय है। परन्तु 'स्वतन्त्रता' और 'स्वेच्छामयता' शक्ति के गुण नहीं हैं। ये गुण शक्ति के आश्रय- श्रीभगवानके गुण हैं। शक्ति भोग्या है, कृष्ण भोक्ता हैं। शक्ति सदैव शक्तिमानके अधीन होती है। शक्तिने कृष्णको सब ओर से घेर रखा है। परन्तु फिर भी कृष्ण शक्तिके स्वामी हैं।
* बद्धजीव शक्तिके परिचयके बिना शक्तिमान का अनुभव नहीं कर सकते। शक्ति शक्तिमयी होती है।

2) शक्ति और कृष्ण अभिन्न हैं। कृष्णकी कामिनी शक्ति श्रीराधाके रूपमें अपना परिचय देती हैं। कृष्ण सेव्य हैं, राधाजी सेविका हैं। राधाजी की इच्छा कृष्णकी इच्छाके अधीन है। उनकी कोई स्वतन्त्र इच्छा या चेष्टा नहीं होती। कृष्णकी इच्छाके अधीन, कृष्ण सेवाकी इच्छा ही श्रीमती राधिकाकी इच्छा है।

3) उपनिषदका ब्रह्म इच्छारहित होता है परन्तु कृष्ण स्वेच्छामय हैं। ब्रह्म निर्विशेष है, कृष्ण शक्तिसे अलग होने पर भी सविशेष हैं। कृष्णमें पुरुषत्व, भोक्तृत्व, अधिकार और स्वतन्त्रता है।

अध्याय - 15
प्रमेयके अन्तर्गत जीव तत्व का विचार

दशमूल श्लोक - 5 →

स्फुलिङ्गा ऋद्धाग्नेरिव चिदणवो जीवनिचया :
हरे : सूर्यस्यैवापृथगपि तु तद्भेदविषया :
वशे माया यस्य प्रकृतिपतिरेवेश्वर इह
स जीवो मुक्तोऽपि प्रकृतिवयोग्य : स्वगुणत : ।

जलती हुई अग्निसे जैसे अनेक क्षुद्र चिनगारियाँ उड़ती हैं, ठीक उसी प्रकार चित् सूर्य स्वरुप भगवानके परमाणु स्वरुप अनन्त जीव हैं। श्री हरिसे अभिन्न होते हुये भी ये जीव नित्य भिन्न हैं। ईश्वर और जीवमें नित्य भेद यह है कि ईश्वर मायाके अधीश्वर हैं और जीव मुक्त अवस्थामें भी मायाके अधीन होने योग्य होता है।
वेदमें कहा गया है →

यथाग्ने : क्षुद्रा विस्फुलिङ्गा व्युच्चरन्ति
एवमेवास्मदात्मन : सर्वाणि भूतानि व्युच्चरन्ति ।

जैसे अग्निसे अनेक क्षुद्र चिनगारियाँ उड़ती हैं, उसी प्रकार कृष्ण से समस्त जीव उत्पन्न हुये हैं।

Ques → 'तटस्थ' शब्दका अर्थ क्या है ?
Ans → जल और भूमिके बीचके स्थानको 'तट' कहते हैं। यह जल और भूमिको विभक्त करने वाली रेखा विशेष है। कभी तट जल द्वारा कटकर नदी बन जाता है फिर कभी नदी की धारा बदल जाने पर भूमिखण्डके साथ मिलकर भूमिका भाग बन जाता है।
चित् जगतको जल और मायिक जगतको भूमि मान लेने पर दोनोंको विभक्त करने वाली सूक्ष्म रेखा ही तट है। दोनोंके सन्धि स्थान पर जीव शक्तिकी स्थिति है। जीव मध्य स्थानमें स्थित होकर एक ओर चित् जगत और दूसरी ओर माया रचित ब्रह्माण्डको देखता है। जीव जब चित् जगतकी ओर देखता है, तब वह चित् शक्ति का बल पाकर चित् जगतमें चला जाता है और शुद्ध चेतन आत्माके रुपमें भगवानकी सेवा करता है। यदि जीव मायाके प्रति दृष्टि करता है, तब वह कृष्ण विमुख होकर मायाजालमें बँध जाता है।
* इस उभयनिष्ठ स्वभाव का नाम ही 'तटस्थ स्वभाव' है। जीव कृष्ण की तटस्था शक्ति से प्रकट हुये हैं अत: जीव का स्वभाव भी तटस्थ है।

* जीव का क्षुद्र स्वरूप तथा चित बल की कमी ही उसके मायाबद्ध होने का कारण है।

Quest जगत में विभिन्न प्रकार के कौन से मत प्रचलित हैं? मायावाद कितने रूपों में प्रचलित है?

Ans ① विवर्तवाद → अज्ञानवश: एक वस्तु के प्रति दूसरी वस्तु की बुद्धि होने को 'विवर्त' कहते हैं। उदा० → रस्सी को सर्प मान लेना।

मायावादी कहते हैं कि ब्रह्म ही मायाग्रस्त होकर जीव बन गया अत: जीव स्वरूपत: ब्रह्म है। वह अज्ञान के कारण अपने को जीव समझ रहा है, परन्तु वह जीव नहीं है।

"अतत्वतोऽन्यथाबुद्धिर्विवर्त इत्युदाहृत:"

विवर्तवाद का खण्डन → (1) रस्सी में सर्प की बुद्धि होना विवर्त है अर्थात् अज्ञान के कारण रस्सी को सर्प मान लिया गया। यहाँ पर इस बात से 2 वास्तविक वस्तुओं का बोध होता है - एक रस्सी और दूसरा सर्प। अर्थात् यहाँ पर दोनों वस्तुओं (रस्सी एवं सर्प) का अस्तित्व है। इसी प्रकार जब ब्रह्म में जीव की बुद्धि हो रही है अर्थात् जीव नाम की कोई एक वस्तु है जिसका अस्तित्व है। यदि जीव नामक कोई वस्तु नहीं होती तो ब्रह्म को जीव कैसे समझ सकते हैं?

2) रस्सी की तुलना सर्प से ही क्यों की गई अन्य किसी वस्तु (कुत्ता, बिल्ली आदि) से क्यों नहीं की गई? क्योंकि रस्सी का आकार सर्प के समान है अर्थात् समान वस्तुओं में ही तुलना की जाती है। उसी प्रकार जीव के गुण (चिन्मयता) भी ब्रह्म के समान ही हैं।

अत: 'ब्रह्म' सत्य और 'जीव' नामक कोई वस्तु नहीं है, ऐसा विचार गलत है।

वैष्णव मत → हम चिन्मय आत्मा होते हुये भी अपना जड़ीय परिचय दे रहे हैं यही विवर्त है। देहात्म बुद्धि ही विवर्त है। जीव भगवान का अंश, चिन्मय है परन्तु वह अपने को जड़ शरीर (स्त्री, पुरुष, राजा, प्रजा आदि) मान रहा है यही विवर्त है।

② प्रतिबिंबवाद → जीव ब्रह्म का प्रतिबिंब है। सूर्य जिस प्रकार जल में प्रतिबिंबित होता है, उसी प्रकार ब्रह्म भी माया में प्रतिबिंबित हुआ और जीव बने। उदा० → सूर्य एक ही है। 100 घड़ों में पानी भरा होने पर सभी में अलग-2 सूर्य दिखाई पड़ रहा है। घड़े फूट जाने पर सूर्य फिर से एक ही रह जायेगा।

इसी प्रकार ब्रह्म एक है, वह निर्विशेष, निराकार है। ब्रह्म ही मायामे प्रतिबिंबित होकर अनेक जीवों के रूपमें दिखाई पड़ रहा है। जीवो के मरने पर फिर से एक ही ब्रह्म रह जायेगा।

प्रतिबिंबवाद का खण्डन → ① प्रतिबिंब किसी आकारयुक्त, सीमायुक्त (ससीम) वस्तुका बनता है। ब्रह्म असीम (सर्वव्यापक, निराकार) है अत: उसका प्रतिबिंब कैसे बन सकता है।

② प्रतिबिंब के लिये 3 वस्तु चाहिए सूर्य, जल और प्रतिबिंब को देखने वाला। यदि जल नहीं है तो प्रतिबिंब कैसे बनेगा?

वैष्णवमत → एक ही सूर्य 100 बाल्टी या घडों में दिखाई दे रहे हैं यह विष्णु तत्व को प्रदर्शित कर रहा है। प्रत्येक जीवके हृदयमें स्थित परमात्मा अलग-2 दिखाई देने पर भी मूल रूपमें एक ही विष्णु तत्व हैं सूर्य एक होने पर भी अलग-2 बाल्टी में अलग-2 दिखाई पड रहे हैं उसी प्रकार ब्रह्माजी कहते हैं कि कृष्ण एक होते हुये भी अलग-2 जीवों के हृदय में परमात्मा स्वरूप में वास करते हैं

③ परिच्छिन्नवाद → 'परिच्छिन्न' अर्थात काटना या अलग करना। घट आकाश-महाकाश। आकाशका कोई आकार नही है परन्तु घड़ा बनाने पर आकाश का एक आकार बन जाता है (घड़े के अन्दर आकाश है)। जब घड़ा फूटता है तो फिर से घट आकाश (घड़े का आकाश) महाकाशमें लीन हो जाता है। उसी प्रकार ब्रह्म एक है जब वही ब्रह्म शरीर धारण कर लेता है (माया द्वारा ग्रसित होकर) तो उसका एक आकार हो जाता है। शरीर नष्ट होने पर फिर से वह ब्रह्ममें लीन होकर एक हो जाता है।

परिच्छिन्नवाद का खण्डन → ब्रह्म जब अखण्ड वस्तु है, तो उसका खण्डन कैसे सम्भव है।

वैष्णवमत → गीता में भगवान ने कहा है →
"ममैवांशो जीव लोके जीवभूत: सनातन:"

जीव भगवान का अंश है। वह सनातन, नित्य है। जीव भगवान का अपना अंश न होकर उनकी शक्तिका अंश है।

परिणामवाद → जीव और जगत, ये सब भगवानकी शक्ति का परिणाम हैं। "आत्म किते परिणामात" जब व्यासदेव द्वारा रचित इस ब्रह्मसूत्रकी टीका शंकराचार्य लिख रहे थे तो शंकराचार्यने कहा कि व्यासदेव यहां पर भ्रमित हो गये हैं। यदि शंकराचार्य परिणामवाद को मान लेते तो मायावाद का खण्डन हो जाता।

स्वप्न स्रष्टि → यह जगत स्वप्न स्रष्टिके समान मिथ्या है। और जीव ब्रह्मसे अलग प्रतीत होता है।

शास्त्रोंके अनुसार स्वप्न स्रष्टि सत्य है मिथ्या नहीं। सत् कर्म और असत् कर्म २ रूपोंमे होते हैं →

1) स्थूल रूप → जो पाप साक्षात् रूपमे स्थूल शरीर से होते हैं, उनका फल स्थूल शरीरमे भोग करना पड़ता है।

2) मानसिक (सूक्ष्म) → जो पाप मानसिक रूपमें या सूक्ष्म शरीरसे होते हैं, उनका फल स्वप्नमे भोग करना होता है।

मायावाद का खण्डन → ① ब्रह्म कोई वस्तु नहीं है, यह वस्तुका गुण है। वस्तु उसको कहते हैं जिसका आकार, गुण, नाम आदि होते हैं परन्तु ब्रह्म निराकर, निर्गुण है अतः वह कोई वस्तु नहीं है। ब्रह्म भगवान की अङ्ग कांति है।

② मायावादी कहते हैं कि ब्रह्म ज्योतिर्मय है अर्थात् ज्योति से युक्त है। इससे २ वस्तुओं का बोध होता है- एक ब्रह्म और दूसरा ज्योति। परन्तु मायावादी कहते हैं कि ब्रह्मके अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु नहीं है फिर 'ज्योति' कहां से आई? ब्रह्मसूत्रके अनुसार → 'आनंदमय का अभ्यास करो'
आनंदमय से २ वस्तुओं का बोध होता है- एक आनंद और दूसरा जिसके अंदर आनंद भरा है। शंकराचार्यने इस सूत्र की टीका लिखते समय इसे बदलकर 'आनंदम् ब्रह्म' कर दिया।

③ ब्रह्म स्वतः सिद्ध तत्व नहीं है जिस प्रकार मोमबत्ती स्वतः सिद्ध है परन्तु उसकी ज्योति

मोमबत्ती पर आश्रित है। इसी प्रकार ब्रह्म भी भगवानके विग्रह का आश्रित तत्व है। गीतामें भगवान कहते हैं →

"ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम् अमृतस्य अव्ययस्य च"

अर्थात् ब्रह्मका आश्रय मैं हूँ। इसलिये 'ब्रह्म' कोई वस्तु नहीं बल्कि वस्तुका गुणमात्र है। गुण कभी भी स्वतन्त्र नहीं होता, वह गुणी के अधीन होता है। उदा० → अग्नि एक स्वतः सिद्ध तत्व है। अग्नि की दाहिका शक्ति और प्रकाश यह दोनों उसके गुण हैं। यह दोनों गुण स्वतन्त्र नहीं हैं बल्कि अग्निपर आश्रित हैं।

Ques) भगवानको शास्त्रोंमें निर्विशेष, निर्गुण, निराकार कहा है, इसका क्या तात्पर्य है?

Ans) निर्गुण → जिसमें जड़ीय गुण नहीं हैं समस्त गुण चिन्मय हैं।

निराकार → जिनका चिन्मय आकार है जड़ीय आकार नहीं है (जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि, क्षय, वृद्धि आदि से रहित)

निर्विशेष → जिनमें चिन्मय विशेषता है। भगवान एक साथ असीम और ससीम हैं। आकारयुक्त होकर सर्वव्यापी हैं।

ब्रह्मसंहिता में ब्रह्माजी भगवानकी स्तुति करते हुये कहते हैं →

अङ्गानि यस्य सकलेन्द्रियवृत्तिमन्ति, पश्यन्ति पान्ति कलयन्ति चिरं जगन्ति
आनन्दचिन्मय सदुज्ज्वलविग्रहस्य, गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि।

जिनका प्रत्येक अंग अन्य सभी अंगों का कार्य कर सकता है। जिनका विग्रह आनन्दमय, चिन्मय है ऐसे गोविन्द का मैं भजन करता हूँ। (भगवान नेत्रों से भोजन कर सकते हैं, हाथों से देख सकते हैं)

Q) ब्रह्म कैसा है? (मायावाद का खण्डन)

Ans) 1) 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' - ब्रह्म ज्ञान स्वरूप है अतः उसको कभी भी भ्रम संभव नहीं है।

2) निर्दोषगुणविग्रह आत्मतन्त्रो निश्चेतनात्मकशरीरगुणैश्चहीन।
आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादि। सर्वत्र च स्वगतभेदविवर्जितात्मा।

बद्धजीव में 18 दोष होते हैं जोकि मुक्तजीवों में नहीं होते फिर ब्रह्ममे दोष कैसे आ सकता है।

Q.) चित् जगत नित्य है, जीवभी नित्य है फिर नित्य वस्तु की स्रष्टि अथवा प्राकट्य कैसे संभव है?

Ans) जड़ीय काल 3 भागोंमें विभक्त है → भूत, वर्तमान और भविष्य। चित् जगत में केवल वर्तमान काल होता है। चित् जगतकी प्रत्येक घटना नित्य वर्तमान होती है। हम जड़ जगत में जो भी वर्णन करते हैं उस पर जड़ीय काल का प्रभाव होता है। इसलिये अणुचित् जीवों और समस्त चित् वस्तुओं के वर्णनमें हम मायिक कालके प्रभावको दूर नहीं कर सकते। चित वस्तुएँ अचिन्त्य होती हैं अत: उनके सम्बन्धमें तर्क करना व्यर्थ है। ये केवल अनुभूति का विषय है। हरिनाम का अनुशीलन करते-2 हृदयमें चिन्मय भाव स्वत: उदित होंगे और तब चित जगत की प्रतीति भी उतनी मात्रा में होगी।

मन और वाणी दोनों जड़ होनेके कारण चित् वस्तु का अनुभव नहीं कर सकते।

"यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" (तै० ब्र० 2/9)

अर्थात् वाणी, मनके साथ जिसे पाने में असमर्थ होकर लौट आती है।

श्रीभागवत सन्दर्भमें बताया है →

एकमेव तत् परमतत्वं स्वाभाविकाचिन्त्यशक्त्या सर्वदैव स्वरूप तद्रूपवैभव-जीव-प्रधान-रूपेण चतुर्द्धावतिष्ठते। सूर्यान्तर्मण्डलस्थतेज इव मण्डल तद्बहिर्गतरश्मि-तत् प्रतिच्छविरूपेण दुर्घटघटकत्वं ह्यचिन्त्यत्वम्।

कृष्ण → सूर्यस्वरूप स्वप्रकाश तत्व
स्वरूप शक्ति → सूर्य मण्डल
जीव शक्ति → बहिर्मण्डलसे निकलने वाली किरणें, स्वरूप शक्तिका अणु कार्य
जीव → किरणों में दिखाई देने वाले क्षुद्र कण
स्वरूप → सच्चिदानंद विग्रह
स्वरूप वैभव → चिन्मय नाम, धाम, परिकर
आश्रय → नित्यमुक्त, नित्य बद्ध अनन्त जीव
प्रधान → जड़ जगत (स्थूल एवं सूक्ष्म)

Ques) अग्नि या सूर्य, किरणें, कण आदि ये सब जड़ पदार्थ हैं। चित तत्वोंकी तुलना इन जड़ पदार्थों से क्योंकी गई है?

Ans) चित् वस्तुकी कुछ गुणोंमें जड़ वस्तुओं से समानता होनेके कारण ही जड़ उदाहरण दिये जाते हैं। अन्यथा जो चित् वस्तु हमने कभी देखी ही नहीं, उसको हम कैसे समझ सकते हैं। जड़ वस्तुओं को हम देखते हैं अत: केवल वे ही हमारी इन्द्रियों द्वारा ग्राह्य हैं। चित् वस्तु ही एकमात्र

वस्तु है, जड़ वस्तुएँ उनका विकार हैं। विकृत वस्तुका शुद्ध वस्तुके साथ अनेक विषयोंमें सादृश्य रहता है। उदा० → ओला जल का विकार है परन्तु शीतलता के गुणोंमें दोनों में समानता है। इस सिद्धान्तके आधार पर जड़ीय उदाहरणों का अनुशीलन कर सकते हैं

* उदाहरण केवल प्रादेशिक गुणोंको व्यक्त करते हैं सार्वदेशिक गुणोंको नहीं। जैसे → दूध जलके समान है - यह कहनेसे दूध के साथ जलके तरलताके गुणकी समानता हो सकती है परन्तु दूधके अन्य गुण जलसे अलग होते हैं।
इसी प्रकार सूर्य स्वप्रकाशित वस्तु है एवं किरणों का पर प्रकाश गुण ही यहाँ चित् वस्तुसे समानता प्रकट करता है। सूर्य के ताप एवं जड़ता गुणोंका चित् वस्तुसे कोई सम्बन्ध नहीं हैं

* 'अरुन्धती- दर्शन' न्याय → अरुन्धती बहुत छोटा तारा है जो सप्तऋषि मण्डलमें स्थित वशिष्ठके पास है। उसको हम सीधे नहीं देख सकते परन्तु पहले उसके समीप स्थित बड़े तारेको देखते हैं फिर सूक्ष्म दृष्टिसे उसके समीप स्थित छोटे तारेको देखते हैं तब छोटा तारा दिखाई देता है। उसी प्रकार अप्राकृत जगत की बातें जड़ जगतकी भाषाके सहारे समझी जा सकती हैं इसके अतिरिक्त इन बातोंको समझाने का कोई अन्य उपाय नहीं है।

Ques→ 'अचिन्त्य भेदाभेद' क्या है?

Ans→ जड़ पदार्थों में भेद और अभेद एक साथ दिखाई नहीं देता परन्तु कृष्णके सम्बन्ध में ऐसा नहीं है। कृष्णके साथ उनकी जीव शक्तिका और जीव शक्ति से उत्पन्न जीवों का एक साथ 'भेद - अभेद' दोनों है। यह 'भेदाभेद' तत्व जड़ बुद्धि से परे होने के कारण 'अचिन्त्य' कहलाता है।

Ques→ जीव का नित्य स्वरूप क्या है?

Ans→ जीव अणु-चैतन्य, ज्ञानसे युक्त, भोक्ता है। जीवका एक नित्य स्वरूप है, यह नित्य स्वरूप अति सूक्ष्म है। जिस प्रकार स्थूल शरीरमें हाथ, पैर, आँख आदि अंग अपने स्थानमें रहकर एक सुन्दर रूप को प्रकाशित करते हैं, उसी प्रकार चित् शरीरमें भी अंग - प्रत्यंगोंसे गठित एक सुन्दर चित् -कण स्वरूप प्रकाशित है। यही स्वरूप जीव का नित्य स्वरूप है। मायाबद्ध होने पर यह नित्य स्वरूप सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर द्वारा ढक जाता है।

जीवात्मा जब यह स्थूल शरीर छोड़ता है तब वह सूक्ष्म शरीर (लिङ्ग शरीर-मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त) तथा उस शरीरकी समस्त कर्म-वासनाओंको साथ लेकर दूसरे शरीरमें प्रवेश करता है। शरीर बदलने पर भी लिङ्ग शरीर नहीं बदलता, लिङ्ग शरीर केवल मुक्त अवस्थामें ही नष्ट होता है। पिछले जन्मोंके संस्कारोंके अनुसार नया शरीर, स्वभाव और वर्ण प्राप्त होता है। फिर जीव वर्णाश्रममें प्रवेशकर पुनः कर्म करता है और यह चक्र चलता रहता है।

Ques) यदि मन, बुद्धि, अहंकार प्राकृत (जड़) वस्तु हैं तो इनमें ज्ञान और क्रिया कैसे है?

Ans) गीतामें भगवानने परा और अपरा शक्ति का वर्णन किया है।

अपरा शक्ति → (जड़ शक्ति, माया शक्ति) अपरा अर्थात् जो श्रेष्ठ नहीं है।

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च

अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।

अपरा शक्ति जड़ है इसलिये ये श्रेष्ठ नहीं होती। इसमें मन, बुद्धि, अहंकार आदि 8 स्थूल तत्व हैं। इनमें जो ज्ञान दिखाई देता है, वह जड़ ज्ञान है।

मन → यह जड़ विषयोंसे सम्बन्धित ज्ञान अर्जन करता है।

बुद्धि → जो वृत्ति जड़ ज्ञान के ऊपर सत्- असत् का विवेचन करती है।

अहंकार → उक्त ज्ञानको प्राप्तकर जो अहं उत्पन्न होता है उसे अहंकार कहते हैं।

ये तीनों मिलकर जीवके जड़ लिङ्ग शरीरको प्रकाशित करते हैं। जड़ बद्ध जीवके लिंग शरीर का 'अहंकार' प्रबल होकर जीवात्मा के नित्य स्वरूपके अहंकारको ढक देता है। मुक्त अवस्थामें फिर से नित्य स्वरूपकी 'अहंता' प्रकाशित हो जाती है। लिंग शरीर सूक्ष्म होने के कारण कार्य नहीं कर सकता इसलिये स्थूल शरीर उसे आच्छादित कर कार्य करता है। स्थूल शरीर द्वारा सूक्ष्म शरीर ढका रहता है अतः इसके कारण एक स्थूल अभिमान → स्त्री, पुरुष, राजा आदि उत्पन्न होता है।

परा शक्ति → (जीव शक्ति) 'परा' अर्थात् श्रेष्ठ शक्ति।

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्

जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।

'पराशक्ति' जीव है। यह चित् कणमय होती है। अति अणुस्वरूप होनेके कारण उसमें दुर्बलता होती है। इस कारण वह मायाशक्ति द्वारा बद्ध होनेके योग्य होता है।



** जीव एक चेतन वस्तु है। उसमें चेतनताके 3 गुण- इच्छा, क्रिया, अनुभव होते हैं
चित- जीवात्मा सूक्ष्म शरीर के द्वारा आवृत रहता है अत: सूक्ष्म शरीर में भी जीवात्मा के गुण - इच्छा, क्रिया, अनुभव दिखाई पड़ते हैं
उदा० → यदि एक दीपकको हम कपड़े से ढक दें, तो कपड़े मे भी प्रकाश दिखाई पड़ता है परन्तु यह कपड़े का अपना प्रकाश न होकर दीपक का प्रकाश है। उसी प्रकार जीव सूक्ष्म शरीर द्वारा आवृत है अत: सूक्ष्म शरीर में भी जीवात्माके चेतनता के गुण प्रकाशित होते हैं परन्तु इससे सूक्ष्म शरीर चेतन नहीं हो जाता बल्कि चेतनाभास कहलाता है।

Ques → 'माया' क्या है?

Ans → "मीयते अनया इति माया" → माया वह शक्ति है जो चित, अचित और जीव इन तीनों जगत में कृष्ण का परिचय प्रदान करती है। अत: 'माया' शब्द से जड़ शक्ति ही नहीं स्वरूप शक्ति का भी ज्ञान होता है।

Ques → श्रीहरि कौन हैं?

Ans → जो हरण करने वाले हैं अर्थात नाम, रूप, गुण, लीलाके द्वारा भक्तों के चित्तको हर लेते हैं और बिना गुणों के चित्त का हरण सम्भव नहीं है अत: हरि निर्गुण नहीं हैं वह अप्राकृत गुणों से युक्त हैं

* चित् लीला युक्त युगल (राधाकृष्ण) ही श्रीहरि हैं

ॐ → अ → विष्णु (स्थिति) ऊ → शिव (प्रलय) म → ब्रह्मा (सृष्टि)

अध्याय - 16

प्रमेय के अन्तर्गत माया ग्रसित जीव तत्व का विवेचन

Ques) जीव जब शुद्ध चित् पदार्थ है, तब उसकी संसाररूप दुर्गति क्यों होती है?

Ans) दशमूल - 6 →

स्वरूपार्थैर्हीनान् निजसुखपरान् कृष्णविमुखान्
हरेर्माया दण्ड्यान् गुणनिगडजालैः कलयति
तथा स्थूलैर्लिङ्गैर्द्विविधावरणैः क्लेशनिकरैः
महाकर्मालानैर्नयति पतितान् स्वर्गनिरयौ।

जीव स्वरूपतः कृष्णका नित्य दास है। कृष्ण दास्य ही उसका स्वरूप धर्म है। उस स्वरूप धर्मसे रहित, निज सुख पर कृष्ण- विमुख जीवोंको दण्ड प्रदान करनेके लिये भगवानकी मायाशक्ति उन्हें सत्व, रज और तमोगुण रूपी जंजीर से बाँध देती है। स्थूल तथा लिङ्ग शरीर से जीवके स्वरूपको आच्छादित कर माया इन्हे दुःखपूर्ण कर्मबन्धनमें डालकर स्वर्ग और नरक में क्रमशः सुख और दुख का भोग कराती है।

२ प्रकारके जीव होते हैं →

1) गोलोक में कृष्णकी सेवाके लिये बलदेव प्रभु द्वारा और वैकुण्ठमें नारायणकी सेवाके लिये श्रीसङ्कर्षण द्वारा प्रकटित नित्य पार्षद जीव अनन्त हैं। वे सदा अपने उपास्यकी सेवामें तत्पर रहते हैं। उनका जड़ मायासे कोई सम्बन्ध नहीं है, प्रेमही उनका जीवन है।

2) कारणोदशायी विष्णु द्वारा मायाके प्रति ईक्षणसे उत्पन्न अणुचैतन्य जीव भी अनन्त हैं। ये जीव मायाके निकट रहते हैं और अत्यन्त अणु (क्षुद्र) होनेके कारण कभी चित जगत कभी मायिक जगतकी ओर देखते हैं। इन अनन्त जीवोंमें से जो मायाको भोग करना चाहते हैं वे विषयोंमें आसक्त होकर माया द्वारा नित्य बद्ध हो पड़ते हैं। जो जीव सेव्य वस्तु (कृष्ण) की सेवाकी इच्छा करते हैं, वे चित शक्ति का बल पाकर चिद्धाम में चले जाते हैं।

* तटस्थावस्था में जीव बहुत दुर्बल होता है, उस समय उसे सेव्य वस्तु (कृष्ण) की कृपा से चित् बल प्राप्त नहीं होता अतः वह मायाबद्ध होनेके योग्य होता है।

Ques) तटस्थ स्थानसे कुछ जीव मायिक जगत और कुछ जीव चित जगत में क्यों चले गये?

Ans) कृष्ण परम स्वेच्छामय (स्वतन्त्र) हैं। उनका यह गुण अर्थात् स्वतन्त्र वासना अणु मात्रामें जीवोंमें भी होती है। इस स्वतन्त्रता का सत् व्यवहार (कृष्णकी सेवा की इच्छा) करनेसे जीव कृष्णोन्मुख होता है और वह चित शक्ति का बल पाकर चित जगत में चला जाता है।

अपनी स्वतन्त्रताका दुरुपयोग करनेसे जीव कृष्ण विमुख हो जाता है। यही कृष्ण-विमुखता

जीवके हृदयमें मायाको भोगनेकी इच्छा उत्पन्न करती है। भोगकी कामना होते ही उसमें यह तुच्छ अहंकार आ जाता है कि मैं जड़ विषयों का भोक्ता हूँ और 5 अविद्यागुण (तमः, मोह, महामोह, तमिस्र, अन्धतमिस्र) जीवके शुद्ध चित स्वरूप को आच्छादित कर देते हैं।

* स्वतन्त्र वासना का सत् अथवा असत् व्यवहार ही जीवके बद्ध या मुक्त होनेका एकमात्र कारण है।

Ques) कृष्णने जीवको इतना दुर्बल क्यों बनाया कि वह मायामें फँस गया?

Ans) कृष्ण करुणामय के साथ-2 लीलामय भी हैं। अलग-2 अवस्थाओं में भिन्न-2 लीलाएँ होंगी ऐसा सोचकर भगवानने जीवको तटस्थावस्थासे लेकर परमोच्च महाभाव आदि तक उन्नत पदके लिये उपयोगी बनाया है। मायाबद्ध जीव स्वरूपसे विच्युत, निजसुखकर, कृष्ण-विमुख होते हैं। जीव इस अवस्थामें जितना अधिक नीचे गिरता है, कृष्ण अपने धाम और पार्षदों के साथ आविर्भूत होकर उन्हें उच्च गति प्राप्त करने का उतना अधिक सुयोग प्रदान करते हैं। जो जीव इस सुविधा को ग्रहण करके उच्चगति प्राप्त करनेका प्रयास करते हैं, वे क्रमशः चिन्मय धाम तक पहुँच जाते हैं।

Ques) ईश्वर की लीलाके लिये दूसरे जीव क्यों कष्ट पाते हैं?

Ans) जीवोंमें स्वतन्त्र वासना का होना उनके प्रति भगवान की विशेष कृपा है क्योंकि स्वतन्त्र वासनाके अभावमें जीव जड़ वस्तुके समान अत्यन्त तुच्छ हो जाता। स्वतन्त्र वासना के कारण ही जीवने जड़ जगतकी प्रभुता पाई है। 'सुख' और 'दुख' तो मात्र मन की गति है। हम जिसे 'दुख' मानते हैं, उसमें आसक्त व्यक्ति उसको 'सुख' मानता है।

जिस प्रकार सोना आगमें तपकर, हथौड़ी से पीटने पर निर्मल होता है, उसी प्रकार जीव भी 'माया भोग' और 'कृष्ण-विमुखता' रूपी मल से युक्त है। माया उसे 'क्लेश' (दुख) रूपी हथौड़ी से पीट-पीटकर शुद्ध करती है। अतः बहिर्मुख जीव का क्लेश अन्तमें सुखदायी होता है। अतः क्लेश प्रदान करना भी भगवानकी जीव के प्रति करुणा है। भगवान ने स्वयं कहा है —

यस्याहम अनुगृह्णामि हरिष्ये तद्धनं शनैः।
ततोऽधनं त्यजन्ति अस्य स्वजना दुखदुखितम्।

* कुन्ती महारानी कहती हैं कि हमारे ऊपर बार-२ कष्ट आयें क्योंकि कष्टमें हमें भगवानका स्मरण रहता है और कृष्ण हमारे साथ होते हैं। इसलिये कृष्ण विमुख जीवोंके लिये जो कष्ट है, वही कृष्णोन्मुख लोगोंके लिये सुख है।

Ques) जीवका क्लेश यद्यपि अन्तमें शुभदायक होता है परन्तु वर्तमानमें कष्टप्रद है। क्या कृष्ण इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं निकाल सकते थे?

Ans) कृष्ण पुरुष और कर्ता हैं। कर्ताकी इच्छाके अधीन होनेसे कुछ न कुछ कष्ट होना तो स्वाभाविक है, किन्तु यदि वह कष्ट अन्तमें सुखप्रद हो तो वह कष्ट नहीं है। कृष्णकी लीलाकी पुष्टिके लिये जो कष्ट दिखाई पड़ता है, वह जीवके लिये परम सुखमय है। कृष्ण यदि कोई अन्य प्रकारकी लीला भी करते तो भी किसी न किसी जीवको तो कष्ट होता। कृष्णमें जो सुख का अंश है उसे छोड़कर जीव ने स्वयं क्लेश स्वीकार किया है।

Ques) यदि जीवको स्वतन्त्र वासना न दी होती तो उसमें क्या हानि थी? कृष्ण जानते थे कि जीवको स्वतन्त्रता देनेसे वह कष्ट पायेगा, फिर कृष्ण ही जीवके कष्टके लिये उत्तरदायी हैं?

Ans) जीव चित्-कण पदार्थ है अतः चित् पदार्थ (कृष्ण) के गुण जीवमें भी अणु मात्रामें पाये जाते हैं। चित् पदार्थ का विशेष धर्म (गुण) 'स्वतन्त्रता' है जोकि एक अमूल्य रत्न है। ~~इस~~ अतः जीवमें भी यह 'स्वतन्त्रता' का गुण आंशिक मात्रा में है। इसी 'स्वतन्त्रता' के कारण ही जीव जड़ जगतमें सर्वश्रेष्ठ पदार्थ है और जड़ जगत का प्रभु है। 'स्वतन्त्रता' के अभावमें जीव भी जड़के समान हो जायेगा।

जीव जब कृष्ण विमुख होकर माया का भोग करके कष्ट पाता है, तो कृष्ण दया करके जड़ जगतमें लीला करनेके लिये अवतार लेते हैं। इतनी दया करने पर भी जब जीव उस लीला तत्वको समझने में असमर्थ होता है तब वे गुरुके रूपमें (चैतन्य महाप्रभु) अपने नाम, रूप, गुण, लीला की स्वयं व्याख्या करते हैं एवं आचरण करके दिखाते हैं। ऐसे में भला हम कृष्णको कैसे दोष दे सकते हैं।

Ques) तब क्या मायाशक्ति ही हमारी दुर्दशा का कारण है? यदि कृष्ण मायाको जीवोंसे दूर रखते तो जीवोंको ऐसा कष्ट क्यों होता?

Ans) माया स्वरूप शक्तिकी छाया है। वह स्वरूप शक्ति का विकार है। माया कृष्णकी दासी है वह कृष्ण-विमुख जीवोंको दण्ड प्रदानकर उनकी चिकित्साकर उन्हें शुद्ध करती है।

यह जगत एक कारागार है और इसकी रक्षयित्री माया है। माया इस जगत-कारागार में कृष्ण विमुख जीवों को बन्दकर दण्ड देती है।
जैसे राजा प्रजाकी भलाईके लिये कारागार बनाता है वैसे ही भगवानने करुणा करके जड जगत रूपी कारागार की स्थापना की और मायाको इसका रक्षक बनाया।
जैसे चोर को जेलमें बन्दकर दण्ड देकर शुद्ध किया जाता है, उसी प्रकार जीवको भी संसार कारागार में दण्ड देकर शुद्ध किया जाता है।

Ques) जड-जगत यदि कारागार है तो बेडी क्या है?
Ans) मायिक जंजीर 3 प्रकारकी है- सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। प्रत्येक जीव इन तीन जंजीरो से बँधा है। जंजीर सोनेकी, चाँदीकी अथवा लोहे की होने पर भी इनसे बँधने में जो कष्ट होता है, उसमें कोई अन्तर नही है।

Ques) मायाकी जंजीर चित-कण जीवको कैसे बाँध सकती है?
Ans) मायिक वस्तु चित् वस्तुको स्पर्श नहीं कर सकती। परन्तु जीव जब यह अभिमान करता है- "मैं मायाका भोक्ता हूँ", उसी समय जीवका चित् स्वरूप जड अहंकार रूप लिङ्ग शरीर से आवृत हो जाता है। सूक्ष्म शरीर से आवृत जीवके पैरों में मायाकी जंजीरें (सत, रज, तम गुण) पड जाती हैं। सात्विक अहंकारसे युक्त उच्च लोकों में वास करने वाले देवताओं के पैरों में सोने की, राजसी जीवों (देवता और मनुष्य के भाव से मिश्र) के पैरों में चाँदी की और तामसी जीवों (जडानन्द में मत्त) की जंजीरें लोहे की रहती हैं।

Ques) माया यदि जीवके स्वरूपको केवल सूक्ष्म शरीर द्वारा आवृत करती तो क्या उसका उद्देश्य पूरा नहीं होता?
Ans) सूक्ष्म शरीरसे कार्य नहीं होता। स्थूल शरीर से जो कार्य किये जाते हैं, उनसे सूक्ष्म शरीर में वासनाएँ उत्पन्न होती हैं। पुनः उन वासनाओं का भोग करनेके लिये स्थूल शरीर मिलता है।

Ques) माया के कारागारमें बद्ध जीव क्या-2 कर्म करते हैं?
Ans) बद्ध जीव 2 प्रकारके कर्म करते हैं →

① भोगके लिये कर्म → जीव भोग वासना की तृप्तिके लिये ही इस जगतमें आया। भोगके लिये ही वह फिरसे 2 प्रकारके कर्म करता है → पाप और पुण्य। जीव अपनी भोग वासनाओं द्वारा परिचालित होकर आहार, निद्रा, मैथुन आदि के वशीभूत होता है। वह सांसारिक भोग करने की आशासे कर्ममार्गमें प्रवृत्त होता है। कुछ जीव पुण्यकर्म और कुछ पापकर्म करके इन्द्रिय सुखों का भोग करते हैं। वे स्वर्ग या नरक में जाने के पश्चात् पुन: मृत्युलोक में जन्म लेते हैं। गीता में भगवान ने कहा है →

" ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकम् विशालम् क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति "

② माया द्वारा दिये गये अभावों को दूर करने के लिये कर्म → क्षुधा, प्यास, वस्त्र, मकान आदि के अभावों को दूर करने के लिये जीव कर्म करता है। तथा माया द्वारा दिये गये कष्टों की निवृत्ति के लिये वह कर्म करता है।

Ques) कर्म और फल एक साथ कैसे संयुक्त हैं ? मीमांसक कहते हैं- ईश्वर नामक कोई चीज नहीं है। किये गये कर्मों से एक तत्व 'अपूर्व' उत्पन्न होता है यह 'अपूर्व' ही समस्त कर्मों का फल प्रदान करता है ?

Ans) वेदो में स्पष्ट रूप से ईश्वर को कर्मफल का दाता बताया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्य: पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभिचाकशीति। (श्वे० → 4/6, ऋग्वेद → 1/164/21)

संसाररूपी पीपलके वृक्ष पर 2 पक्षी बैठे हैं एक बद्ध जीव और दूसरा उसका सखा-ईश्वर। बद्धजीव रूपी पक्षी संसार वृक्षके फलोंको चखता है और ईश्वर उन फलोंका उपभोग न कर जीवरूपी पक्षीको आस्वादन करते हुये देखते हैं।

* कर्म एक जड़ वस्तु है क्योंकि उसका आश्रय यह जड़ शरीर है। यदि यह मानलें कि कर्मसे अपूर्व उत्पन्न होता है तो 'अपूर्व' भी जड़ हुआ क्योंकि जड़ वस्तु से कभी भी चिन्मय वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती। कोई भी फल प्रदान करने के लिये चिन्मयता की आवश्यकता होती है, 'अपूर्व' जब स्वयं जड़ है तो वह फल कैसे प्रदान कर सकता है ?

गीता में भगवान ने अर्जुन से कहा →

" मयैवैते निहता: पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् । " (गीता → 11/33)

अर्थात् ये समस्त योद्धा तो मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं तुम केवल निमित्तमात्र बनो। इससे स्पष्ट है कि भगवान सभीके कर्मों के फल को पहले ही निर्धारित

कर देते हैं।

Quest) आपने कर्मको अनादि क्यों कहा ?

Ans) कर्मों का मूल कर्मवासना है और कर्मवासना का मूल अविद्या है। "मैं कृष्ण का दास हूँ" यह भूलना ही अविद्या है। यह अविद्या विरजा नदीके तट पर (तटस्थ स्थान) जहाँ जीव प्रकट होकर कृष्ण विमुख हुआ, वहीं पर उदित हुई अत: इसकी उत्पत्ति (अविद्या) ब्रह्माण्ड के जड़ीय कालके अन्तर्गत नहीं है। इसलिये जड़ कालमें कर्मका आदि नहीं पाया जाता अत: कर्मको अनादि कहा है।

Quest) कर्म किस प्रकार अनादि नहीं है ?

Ans) कर्म का मूल वासना और वासना का मूल अविद्या है। अर्थात् कर्म भी किसी से उत्पन्न हुआ (कर्मका भी कोई आदि है) अत: कर्म अनादि नहीं है।

Quest) माया और अविद्यामें क्या अन्तर है ?

Ans) माया कृष्ण की शक्ति है जो ब्रह्माण्ड रूपी कारागारका निर्माण करती है तथा जीवोंको सत, रज, तम गुणों द्वारा बाँधकर उन्हें दण्डप्रदानकर शुद्ध करती है।

माया की २ वृत्ति हैं →

① प्रधान वृत्ति → (जड़निष्ठ) → इसके द्वारा समस्त जड़ जगत का निर्माण हुआ।

② अविद्या वृत्ति → (जीवनिष्ठ) → जीवके शुद्ध अभिमान (मैं कृष्ण का दास हूँ) को आवृत करके उसको स्थूल अभिमान (स्त्री, पुरुष, पिता, पुत्र आदि) प्रदान करती है।

इसके अतिरिक्त मायाके २ और विभाग हैं → विद्या और अविद्या, ये दोनों जीवनिष्ठ हैं।

(i) अविद्या → इसके द्वारा जीव का बन्धन होता है। अपराधी व्यक्ति जब तक कृष्ण को भूला है तब तक उसके अन्दर अविद्या वृत्ति की क्रिया चलती रहती है। यह जीवके शुद्ध अभिमानको आवृत कर देती है।

(ii) विद्या वृत्ति → इसके द्वारा जीव की मुक्ति होती है। अपराधी जीव जब कृष्णोन्मुख होता है तब उसके अन्दर विद्या वृत्ति की क्रिया आरम्भ होती है। इसके फलस्वरूप जीवमें शुभ चेष्टाओं (सत् कर्म) की उत्पत्ति होती है। सत् कर्म के फलस्वरूप ब्रह्म ज्ञान का उदय होता है और ब्रह्मज्ञान से मुक्ति होती है।

Quest माया जीवको कैसे दण्ड प्रदान करती है ?

Ans माया जीवको 3 गुणों मे बाँधकर दण्ड प्रदान करती है →

सतोगुण → यह सोने की जंजीर के समान है, यह सुखसे बाँधता है।

रजोगुण → यह चाँदी की जंजीर के समान है, यह कर्म और फल से बाँधता है।

तमोगुण → यह लोहे की जंजीर के समान है, यह काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि से बाँधता है।

गीता मे भगवान ने कहा →

सत्वं रजस्तम इति गुणा: प्रकृतिसम्भवा:

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ।

अर्थात् सत, रज, तम गुणों के द्वारा प्रकृति जीवको इस शरीर से बाँध देती है।

Quest क्या मुक्ति निर्गुण है ?

Ans मुक्ति निर्गुण नही है क्योंकि यह ज्ञान से मिलती है और ज्ञान सतोगुण से उत्पन्न होता है। मुक्ति का स्थान ब्रह्माण्ड से बाहर तथा वैकुण्ठ से पहले 'मुक्तिलोक' या 'सिद्धलोक' है। अत: मुक्ति ब्रह्माण्ड के तीनो गुणों (सत, रज, तम) से परे होने के कारण सगुण भी नही है।

Quest प्रधानकी क्रिया कैसी होती है ?

Ans 1) प्रलयके समय प्रकृतिके 3 गुण (सत, रज, तम) समान हो जाते हैं तथा प्रकृति (माया) निष्क्रिय हो जाती है। जब भगवान की सृष्टि करनेकी इच्छा होती है तो वे मायाके प्रति ईक्षण (दृष्टिपात) करते हैं। माया जड़ है परन्तु भगवान का ईक्षण चिन्मय है अत: इस ईक्षण के फलस्वरूप निष्क्रिय माया क्रियाशील हो जाती है। प्रकृतिके क्रियाशील होनेसे प्रकृति के 3 गुणों मे विक्षोभ हुआ जिससे प्रथम तत्व 'महत्-तत्व' प्रकट हुआ।

2) महत् तत्व काल, स्वभाव और कर्मके द्वारा विकारको प्राप्त हुआ और उससे अहंकार उत्पन्न हुआ।

3) अहंकार मे विकार होने पर यह 3 प्रकार का हो गया - वैकारिक (सात्विक), तैजस (राजसिक) और तामसिक। तामसिक अहंकार की शक्ति महाभूतों (वायु, आकाश आदि) पर, राजसिक अहंकार की शक्ति इन्द्रियों पर और सात्विक अहंकार की शक्ति इन्द्रियोंके देवताओं पर कार्य करती है।

4) तामसिक अहंकार में विकृति होने पर आकाश की उत्पत्ति होती है। आकाश का गुण 'शब्द' है।

आकाश में विकार होने पर वायु उत्पन्न हुई। वायु के अन्दर आकाश का गुण शब्द और अपना एक गुण 'स्पर्श' है। वायु से ही देह धारण, इन्द्रियों की ओज शक्ति, मन की सहन शक्ति और शरीर में बल होता है।

5) वायु में विकार से तेज की उत्पत्ति हुई। तेज में शब्द और स्पर्श के साथ अपना गुण रूप भी है।

6) तेज में विकार होने पर जल उत्पन्न हुआ। इसमें शब्द, स्पर्श, रूप के साथ अपना गुण रस भी है।

7) जल में विकार से पृथ्वी उत्पन्न हुई जिसमें शब्द, स्पर्श, रूप, रस के साथ अपना गुण गंध भी है।

8) राजसिक अहंकार विकृत होने पर 10 इन्द्रियाँ उत्पन्न हुई →
5 ज्ञानेन्द्रियाँ → चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा।
5 कर्मेन्द्रियाँ → वाक् (मुख), पाणि (हाथ), पाद (पैर), पायु (जननेन्द्रिय), उपस्थ (मलद्वार)।

9) सात्विक अहंकार विकृत होने पर मन और इन्द्रियों के देवता उत्पन्न हुये
मन → चन्द्रमा, कान → दिशा, त्वचा → पवन, चक्षु → सूर्य,
जिह्वा → वरुण, नासिका → अश्विनीकुमार
वाक् → अग्नि, पाणि → इन्द्र, पाद → उपेन्द्र, पायु → मित्र, उपस्थ → प्रजापति

24 मायिक तत्व हैं → 10 इन्द्रियाँ, 5 महाभूत, 5 तन्मात्रा, मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त।

* 24 तत्वों से बने शरीर में अणु चैतन्य जीव 25वां और परमात्मा 26वां तत्व है।

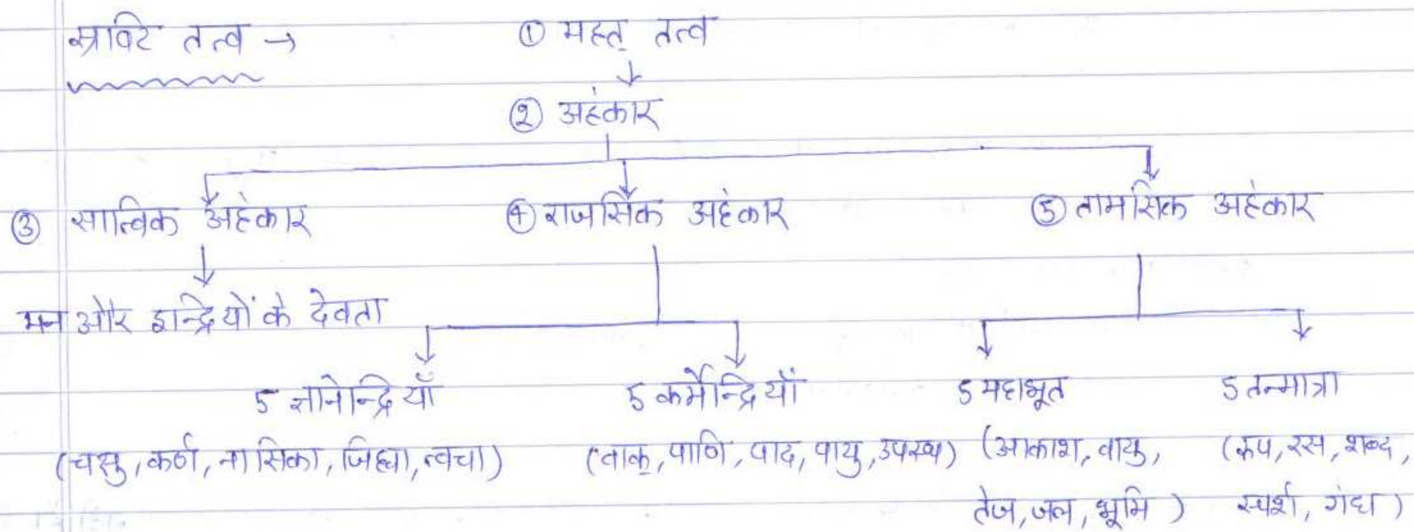
Ques → हमारे शरीर में स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर का कितना भाग है? जीवात्मा कहाँ वास करता है?

Ans → स्थूल शरीर → 5 महाभूत, 5 तन्मात्रा, 5 ज्ञानेन्द्रियाँ, 5 कर्मेन्द्रियाँ। यह जड़ है।
सूक्ष्म शरीर → मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त। यह चेतनाभास है।
जीवात्मा → यह चेतन है। यह अति सूक्ष्म, जड़िय देश-काल और गुणों से

अतीत है। अति सूक्ष्म होने पर भी सारे शरीरमें इसकी सत्ता व्याप्त रहती है।
वेदान्तसूत्रमें जीवात्माके विषयमें कहा है →
अविरोधश्चन्दनवत् (ब्रह्मसूत्र → २/३/२२) → जिस प्रकार मस्तक पर चन्दन लगाने से सारे शरीरमें उसकी शीतलता का अनुभव होता है उसी प्रकार अणु सूक्ष्म जीवात्मा भी सारे शरीर में व्याप्त रहता है।
गीता में भगवानने कहा है →

यथा प्रकाशयत्येक: कृत्स्नं लोकमिमं रवि:।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत। (गीता → 13/33)

जिस प्रकार एक सूर्य सारे जगत् को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार एक जीवात्मा सारे शरीर को प्रकाशित करता है।



⑥ अविद्या । एक से लेकर 6 तक सृष्टि माया द्वारा की गई अत: इसे 'मायिक सृष्टि' कहते हैं। 7 से लेकर 10 तक सृष्टि ब्रह्माजी द्वारा की गई अत: इसे 'वैराज सृष्टि' कहते हैं।

⑦ स्थावर → इसमें पर्वत, नदी, वृक्ष आदि की सृष्टि हुई।

⑧ तिर्यक → इसमें पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि की सृष्टि हुई।

⑨ मनुष्य →

⑩ देवता

Ques→ यदि जीव कर्मका और सुख-दुख का भोक्ता है तो ईश्वर का कर्तृत्व कहाँ रहा?
Ans→ भगवान प्रयोजक कर्ता और जीव प्रयोज्य (हेतु) कर्ता है।
उदा०→ एक मालिकने नौकर को बाजारसे फल लाने की आज्ञा दी। नौकर बाजारसे फल ले आया। यहाँ पर नौकर ने जो कार्य किया वह अपनी इच्छासे नहीं बल्कि मालिककी इच्छानुसार किया। अतः मालिक प्रयोजक कर्ता और नौकर प्रयोज्य कर्ता है।
इसी प्रकार जीव इस जन्ममे अपने पूर्व जन्मोंके कर्मों का भोग करता है तथा साथ ही साथ अगले जन्मोंके लिये नये कर्म भी करता है। अपने पूर्व जन्मोंके कर्मोंके फल भोगने एवं नये कर्म कराने में भगवान प्रयोजक कर्ता हैं और जीव प्रयोज्य कर्ता है। ईश्वर फलदाता एवं जीव फलभोक्ता है। गीता में भगवान ने कहा है→

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया। (गीता→18/61)

अर्थात् भगवान सबके हृदय में स्थित हैं और प्रत्येक जीव को यन्त्रारूढ की भाँति उसके कर्मों के फल भोग करा रहे हैं।
भविष्यपुराण के अनुसार →

पुण्यपापादिकं विष्णुः कारयेत् पूर्वकर्मणा
अनादित्वात् कर्मणश्च न विरोधः कथञ्चन।

जीव की स्वतन्त्र इच्छा से किये गये पुण्य और पाप आदि के लिये विष्णु उत्तरदायी नहीं हैं। भगवान प्रयोजक कर्ता और जीव प्रयोज्य कर्ता हैं।

न कारयेत् पुण्यमथापि पापं न तावता दोषवाणीक्षितापि
ईशो यतो गुण दोषादि सत्वे स्वयं परोमदिरादिः प्रजानाम्। (चतुर्वेद शिखा)

भगवानमें विषमता और घृणा रूपी दोषकी सम्भावना नहीं है। भगवान जीवके पूर्व कर्मों के अनुसार ही उनसे पुण्य-पापादि कराते हैं।

Ques→ मायाबद्ध जीवकी कितनी अवस्था है? चेतन कितने प्रकार का है?
Ans→ चेतन 5 प्रकारके हैं→
(1) आच्छादित चेतन→ ये जीव कृष्ण दास्यको भूलकर जड़ीय गुणोंमें अभिनिविष्ट हैं। यह जीवके पतनकी चरम अवस्था है। इनका चित् धर्म प्राय: लुप्त हो चुका है। उदा०→ वृक्ष, लता, पर्वत आदि। किसी विशेष अपराधके

होनेसे पत्थर, वृक्ष आदि बननाभी आच्छादित चेतन है। उदा० → अहिल्या, यमलार्जुन, सप्रताल।

② संकुचित चेतन → संकुचित चेतनकी चेतनता कुछ मात्रामें दिखाई पड़ती है। उदा० → पशु, पक्षी, सर्प, मछली, जल जन्तु, कीट-पतङ्ग आदि। आहार, निद्रा, भय, मैथुन, इच्छानुसार कहीं भी आना-जाना, अपने अधिकारके लिये दूसरोंसे झगड़ा (उदा० → कुत्ते, बन्दर अपने क्षेत्र में दूसरों को नहीं आने देते), अन्याय देखकर क्रोध - ये सब गुण इनमें दिखाई देते हैं। इन जीवोंमें ईश्वर जिज्ञासाकी प्रवृत्ति नहीं होती, इनका चेतन धर्म संकुचित होता है।

* भरत महाराज (मृग योनि), नृग महाराज (गिरगिट योनि), इन्द्रद्युम्न महाराज (हाथी योनि) को पशु योनिमें भी भगवान का स्मरण था परन्तु यह साधारण नियम नहीं है।

③ मुकुलित चेतन → मनुष्य का जन्म लेने पर भी जो ईश्वरमें विश्वास नहीं करते और जो लोग नीति शास्त्र नहीं मानते। ये २ प्रकार के हैं →

i) नीति रहित → जो नीति शास्त्रों को नहीं मानते।

ii) नीति निरीश्वर → जो नीति शास्त्र मानते हैं परन्तु ईश्वरको नहीं मानते।

④ विकसित चेतन → जिन्होंने गुरु पदाश्रय कर भजन शुरु कर दिया है। साधन भक्त इसी श्रेणी में हैं।

⑤ पूर्ण विकसित चेतन → जिनको अपने स्वरूप का ज्ञान हो चुका है तथा सम्बन्ध ज्ञान हो गया है। भाव भक्त एवं प्रेम भक्त इस श्रेणीमें आते हैं।

अध्याय - 17

प्रमेयके अन्तर्गत मायासे मुक्त जीवों का विचार

दशमूल श्लोक -7

यदा भ्रामं भ्रामं हरिरसगलद्वैष्णवजनं
कदाचित् संपश्यन् तदनुगमने स्याद् रुचियुत :
तदा कृष्णावृत्यात्यजति शनकैर्मायिकदशां
स्वरूपं विभ्राणो विमलरसभोगं स कुरुते।

संसारमें ऊँच-नीच योनियोंमें भ्रमण करते हुये जब हरि रसमें मत्त वैष्णवका दर्शन प्राप्त होता है, तब मायाबद्ध जीवको वैष्णव मार्गके प्रति रुचि उत्पन्न होती है। कृष्ण नामका उच्चारण करते-2 धीरे-2 उनकी मायिक दशा दूर हो जाती है। जीव क्रमश: स्व-स्वरूप प्राप्त करता हुआ विमल कृष्ण-सेवा- रस आस्वादन करने योग्य होता है।

उपनिषदमें कहा गया है ->

समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नो शोचति मुह्यमान :
जुष्टं यदा पश्यति- अन्यमीशमस्य महिमानमेति वीतशोक : । (मुण्डक->3/1/2)

एक वृक्ष पर स्थित जीव माया द्वारा मोहित होकर शोकग्रस्त है। जब वह सेवनीय वस्तु परमेश्वर का दर्शन कर लेता है, तब शोकरहित होकर अपनी कृष्णदास्य रूप महिमाको प्राप्त कर लेता है।

Ques) 'मुक्ति' क्या है ?

Ans) मायाके बन्धनसे छुटकारा पाने का नाम ही 'मुक्ति' है। जिस क्षण मायाके बन्धनसे छुटकारा मिलता है उसी क्षण मुक्तिका कार्य समाप्त हो जाता है अत: मुक्ति एक क्षणिक क्रिया है।

वैष्णव मुक्ति -> "मुक्तिर्हित्वान्यथारूपं स्वरूपेण व्यवस्थिति :"
अन्यथा रूप का परित्यागकर अपने स्वरूपमें स्थित होना ही मुक्ति है।

मायावादी मुक्ति -> "आत्यान्तिक दुख निवृत्ति : इति मुक्ति"
आत्यान्तिक दुख निवृत्तिको मुक्ति कहते हैं।

* मुक्ति एक क्षणिक क्रिया है अत: मुक्ति होनेके बाद चित् सुखकी प्राप्ति एक अन्य अवस्था है। उदा०-> एक व्यक्ति जेल से मुक्त हुआ परन्तु बाहर निकलने पर उसके परिवार का कोई व्यक्ति उससे मिलने नहीं आया। यहाँ पर उसकी

दुख निवृत्ति हो गई परन्तु सुखकी प्राप्ति नहीं हुई।
दूसरा व्यक्ति जेलसे मुक्त हुआ और अपने परिवारमें चला गया। यहाँ दुख निवृत्तिके साथ-२ उसको सुखकी प्राप्ति भी हो गई।

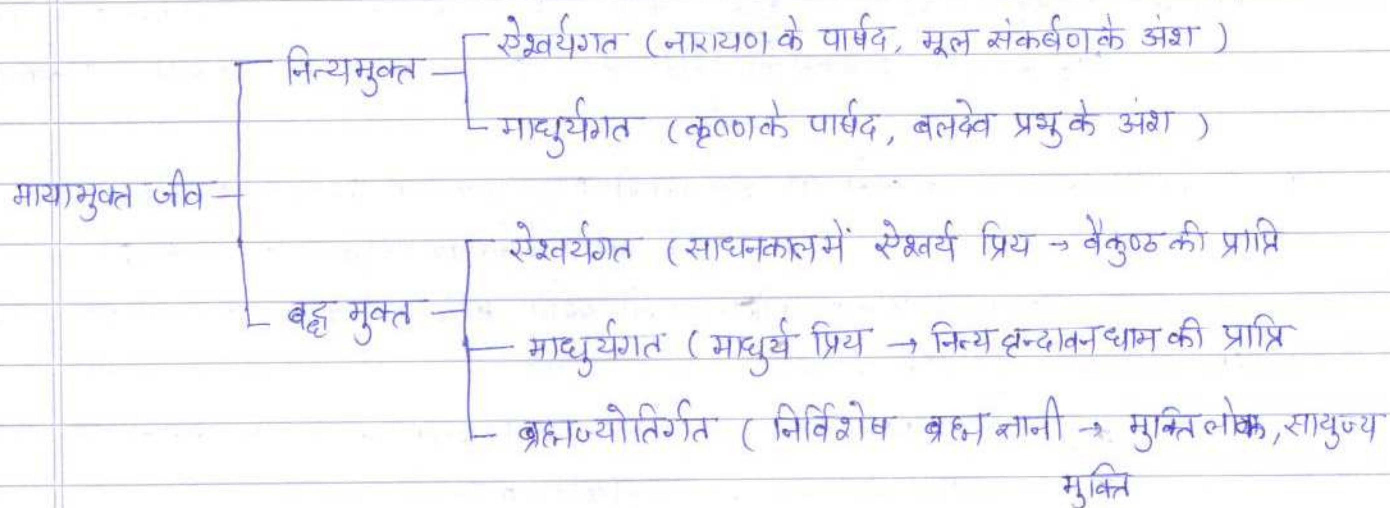
Ques. 'मुक्ति' कितने प्रकार की होती है? किस अवस्थामें पहुँचने पर भक्तजन मायामुक्त कहलाते हैं?

Ans. मुक्ति २ प्रकार की है → वस्तुगत मुक्ति और स्वरूपगत मुक्ति।

① वस्तुगत मुक्ति → भक्त जीवन प्रारम्भ होते ही साधक माया-मुक्त कहलाने लगता है। परन्तु 'वस्तुगत मुक्ति' भाव भक्तिकी परिपक्व अवस्थामें होती है। भाव भक्तिकी प्रारम्भिक अवस्थामें भी मायिक दशा रहती है। भाव भक्तिमें दृढ़ रूपसे स्थित होने पर जीवका जड़ एवं सूक्ष्म शरीर नष्ट हो जाता है तथा वह चित शरीर प्राप्त कर लेता है, इसी अवस्थामें उसकी वस्तुगत मुक्ति होती है।

② स्वरूपगत मुक्ति → भाव भक्ति की प्रारम्भिक अवस्था तक केवल स्वरूपगत मुक्ति होती है।

** जीव नित्य कृष्ण दास है' - इसे भूलनेके कारण ही जीव मायाबद्ध हुआ है। यह कृष्णके चरणोंमें मूल अपराध है। जिनके चरणोंमें अपराध किया है, उन्हींकी कृपासे हमें इस अपराधसे मुक्ति मिल सकती है। अतः कृष्णकी कृपाके बिना हमें कभी भी मायासे मुक्ति नहीं मिल सकती। जो लोग ज्ञान, कर्म, योग आदि से मुक्ति चाहते हैं, उनका श्रम व्यर्थ है।



Ques) मायसे मुक्त जीवोंके क्या लक्षण हैं?

Ans) छान्दोग्य उपनिषद के अनुसार → मुक्त जीवोंमें 8 लक्षण होते हैं। यही आत्माके भी गुण हैं।
"आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्प सोऽन्वेष्टव्यः"।

1) पाप शून्य (अविद्या शून्य) (2) जरा रहित (नित्यनूतन) (3) मृत्युरहित
4) शोकरहित (5) भोगवासना रहित (6) अपिपास (भगवानकी सेवाके अतिरिक्त अन्य वासना रहित) (7) सत्यकाम (कृष्णकी सेवाके उपयुक्त कामना)
(8) सत्यसंकल्प (जो कामना करते हैं, वह सिद्ध होती है)

Ques) क्या सिर्फ वैष्णव संग से ही कल्याण होता है? ब्रह्मज्ञान, अष्टाङ्ग योग आदिसे हरि भक्ति नहीं मिलती?

Ans) श्रीमद्भागवतमें कहा गया है →

नैषां मतिस्तावदुरुक्रमाङ्घ्रिं स्पृशत्यनर्थापगमो यदर्थः।
महीयसां पादरजोऽभिषेकं निष्किंचनानां न वृणीत यावत्। (भा०→7/5/32)

जब तक जीव अकिंचन, भगवत्प्रेमी, महात्मा भगवद्भक्तोंकी चरण धूलिमें स्नान नहीं कर लेता तब तक समस्त अनर्थोंका नाश करने वाले भगवत-चरणोंमें उसकी मति नहीं लगती।

* जब कभी पूर्व सुकृतिके प्रभावसे जीवको साधु संग मिलता है उसी समयसे कृष्णके चरणोंमें उसकी मति लग जाती है।

सुकृति → सु → शुभ, कृति → कर्म शास्त्रोंमें शुभ कर्मों को सुकृति कहा है।
यह सुकृति 2 प्रकारकी होती है → भक्ति प्रवर्तक एवं अवांतरफल प्रवर्तक।

(1) भक्ति प्रद सुकृति → जाने या अनजाने में शुद्ध भक्ति के 64 अंगों मेंसे किसी भी अंग का पालन होने पर भक्ति प्रद सुकृति बनती है। उदा०→ एकादशी उपवास, भगवानकी लीला स्थली दर्शन, मन्दिर परिक्रमा, हरिकथा श्रवण आदि।
यह 2 प्रकार की होती है →

i) ज्ञात सुकृति → जब भक्ति अंगोंका पालन उनकी महिमाको जानकर किया जाता है, उसे ज्ञात सुकृति कहते हैं।

ii) अज्ञात सुकृति → भक्तिकी महिमाको न जानते हुये अनजानेमें जब भक्ति अंगों

का पालन हो जाता है उसे अज्ञात सुकृति कहते हैं उदा० → मालीने बाग में पौधोंको पानी देते समय तुलसी में भी जल दे दिया, यह उसकी अज्ञात सुकृति बन गई।

** जो लोग भक्ति अंगोंका पालन करते हैं परन्तु बदले में उनसे भोग-मोक्ष की कामना करते हैं, उनकी भक्तिप्रद-सुकृति नहीं बनती। यदि अतत्वज्ञ व्यक्ति संयोगवश अथवा लौकिक व्यवहारसे भुक्ति-मुक्तिकी कामनासे रहित होकर भक्ति अंगोंका पालन करते हैं तो ये भक्तिप्रद सुकृति प्रदान करते हैं
यही भक्तिप्रद सुकृति अनेक जन्मों में संचित होकर अनन्य भक्तिके प्रति श्रद्धा उत्पन्न करती है। भक्तिमें श्रद्धा होने पर शुद्ध भक्तोंका संग प्राप्त करनेकी कामना होती है। सत्संग के प्रभाव से साधन-भजन होने लगता है। भजन जितना शुद्ध होता है, अनर्थ उसी परिमाण में दूर होते हैं। अनर्थ दूर होने पर कोमल श्रद्धा निष्ठा में बदल जाती है। उसके बाद क्रमशः रुचि, आसक्ति और भाव का उदय होता है। भाव प्रगाढ़ होने पर प्रेम मे बदल जाता है।

(२) अवांतर फल प्रवर्तक सुकृति → शुभ कर्म (दान, पुण्य, व्रत आदि) अपना फल देकर निवृत्त हो जाते हैं, ऐसे शुभ कर्मों से जो सुकृति बनती है उसे 'अवांतर फल प्रवर्तक सुकृति' कहते हैं। कर्म, ज्ञान, वैराग्य आदि जीवको एक अवांतर फल में बाँध देते हैं। कर्मसे स्वर्ग आदि सुख, सांख्य से सिद्धि एवं ज्ञान से मुक्तिरूपी फल प्राप्त होते हैं यही अवांतर फल हैं। शुद्ध भक्तोंके संगका कोई अवांतर फल नहीं होता वह जीव को कृष्ण प्रेम तक ले जाता है।

Ques) साधु सङ्ग कितने प्रकारका होता है?
Ans) 1) प्रथम साधुसंग घटनावश भक्तिप्रद सुकृतिके फलस्वरूप होता है, इसका फल श्रद्धा है। श्रद्धाको शरणागति भी कहते हैं। गीता में भगवानने इस शरणागति का लक्षण बताया है →

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। (गीता → 18/66)

यहाँ पर सर्वधर्मों से स्मार्त धर्म, अष्टाङ्ग योग, सांख्य, ज्ञान, वैराग्य आदिको लिया गया है।

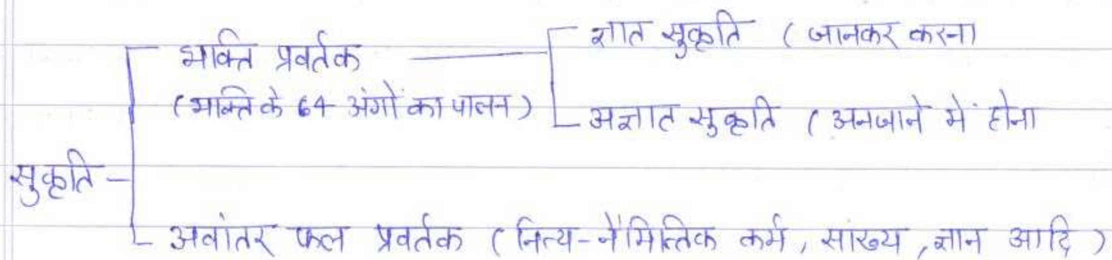
2) द्वितीय साधुसंग → जब जीव समस्त धर्मों का परित्यागकर भगवानके शरणागत होता है, तब उसको "प्रवृत्तिरूप श्रद्धा" कहते हैं। यह श्रद्धा उत्पन्न होनेके बाद

जीव वैष्णव-साधु के अनुगमन में प्रवृत्त होता है। अब वह जिस साधु का आश्रय लेते हैं, वही श्रीगुरु हैं। यह द्वितीय साधुसंग है।

* प्रथम साधुसंग का फल गुरु पदाश्रय और द्वितीय साधुसंग का फल भजन परिपाटी की शिक्षा प्राप्त करना है।

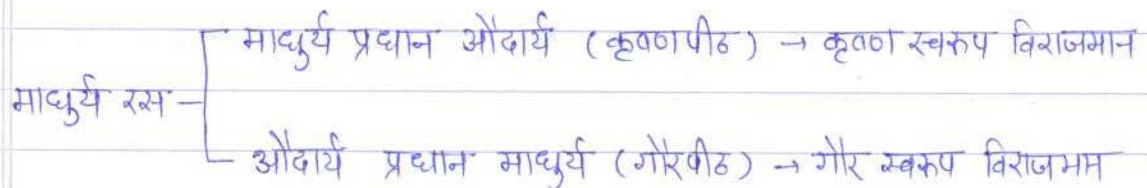
Ques) क्या अनर्थ रहित व्यक्ति को 'मुक्त पुरुष' कह सकते हैं?

Ans) अनर्थमुक्त पुरुष ही शुद्ध भक्त हैं, ऐसे भक्त अत्यन्त दुर्लभ हैं। शुद्ध कृष्ण भक्त ही वैष्णव हैं चाहे वह गृहस्थ हो या त्यागी, ब्राह्मण हो या चाण्डाल।



Ques) गौरकिशोर के भक्तों की चरमगति क्या है?

Ans) कृष्ण और गौर दोनों मधुर रस के आश्रय हैं।



** 1) जो साधनकाल में केवल गौर उपासक होते हैं, वे सिद्धिकाल में केवल गौरपीठ में सेवा करते हैं।

2) जो साधनकाल में केवल कृष्ण उपासक हैं, वे सिद्धिकाल में केवल कृष्णपीठ में सेवा करते हैं।

3) जो साधनकाल में कृष्ण और गौर दोनों के उपासक हैं, सिद्धिकाल में वे दो शरीर धारण कर दोनों पीठों में एक साथ सेवा करते हैं।

अध्याय - 18

प्रमेय के अन्तर्गत भेदाभेद विचार

दशमूल - 8 →

हरे: शक्ते: सर्वं चिदचिदखिलं स्यात् परिणति:
विवर्तं नो सत्यं श्रुतिमितिविरुद्धं कलिमलम्
हरेर्भेदाभेदौ श्रुतिविहित तत्वं सुविमलं
तत: प्रेम्न: सिद्धिर्भवति नितरां नित्यविषये।

चित्-अचित् समस्त जगत कृष्णकी शक्तिका परिणाम है। विवर्तवाद सत्य नहीं है, यह कलिकाल का मल और वेद विरुद्ध मत है। अचिन्त्य-भेदाभेद तत्व ही वेद सम्मत विशुद्ध मत है। अचिन्त्य भेदाभेद तत्वसे ही नित्य तत्वके प्रति प्रेम सिद्धि होती है।

Ques→ 'वेदान्त सूत्र' क्या है?

Ans→ 1) श्रील व्यासदेवने कलियुगके जीवों के कल्याणके लिये एक वेद को 4 भागों में विभक्त किया→ ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद।

2) वेदोंको समझना कठिन था क्योंकि इनमें मंत्र होते हैं अत: व्यासदेवने इन वेदोंके मंत्रोको कथाओं के माध्यमसे 108 उपनिषदों मे व्यक्त किया। इन उपनिषदोंको वेदान्त कहते हैं।

3) 108 उपनिषदों में से 550 सूत्र संकलित करके व्यासदेव ने 'वेदान्त सूत्र' की रचना की। 'वेदान्त सूत्र' को 'ब्रह्म सूत्र' भी कहते हैं।

Ques→ श्रीचैतन्य महाप्रभुने कौन सा मत स्वीकार किया?

Ans→ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने मध्वाचार्यके सम्प्रदायको स्वीकार करते हुये उनके मतका सार मात्र ग्रहण किया तथा 'अचिन्त्यभेदाभेद' तत्व प्रकाशित किया। अन्य सभी सम्प्रदायके आचार्यों ने अपने विभिन्न मत दिये, मत के ऊपर वाद-विवाद की सम्भावना है परन्तु अचिन्त्य-भेदाभेद मत न होकर वेदोंका सार तत्व है अत: इस पर वाद-विवादकी कोई सम्भावना नहीं है।

Ques→ परिणामवाद कितने प्रकार का होता है?

Ans→ परिणामवाद 2 प्रकारका है → 1) ब्रह्म परिणामवाद (2) शक्ति परिणामवाद

विकार या परिणाम → एक वस्तु जब किसी कारणवश दूसरी वस्तुमें परिणत हो जाती है तो दूसरी वस्तुको पहली वस्तु का 'विकार' या 'परिणाम' कहते हैं।

उदा० → दूध जमने पर दही बनता है अत: दही दूधका विकार है।



(1) ब्रह्म-परिणामवाद → 'ब्रह्म' ही परिणत होकर एक अंशसे जीव और दूसरे अंशसे जड़-जगत बने हैं। 'एकमेवाद्वितयम्' अर्थात् विश्वकी सृष्टि से पहले एक अद्वितीय और सत्य तत्व 'ब्रह्म' था।

* ब्रह्म परिणामवाद सत्य नहीं हो सकता क्योंकि ब्रह्म निर्विकार है, उसमें कभीभी विकार सम्भव नहीं है। और जब ब्रह्मके अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है तो दूसरी वस्तु कहाँ से आ गई ?

(2) शक्ति - परिणामवाद → ब्रह्मका विकार सम्भव नहीं है अतः ब्रह्मकी अचिन्त्य शक्ति परिणत होकर एक अंशसे जीव (जीवशक्तिसे) और एक अंशसे (मायाशक्ति से) जड़-जगतके रूप में प्रकाशित हो गई।

* शक्ति - परिणामवाद स्वीकार करने से 'ब्रह्म' अविकृत रहते हैं अतः ब्रह्मकी इच्छासे शक्तिमें विकार सम्भव है।

शक्ति परिणामवाद भी 2 प्रकार का है →

1) बीज से वृक्ष बना, वृक्ष ही परिणत होकर फूल, फल आदि बने। इसमें शक्तिका विकार होकर नई वस्तु बन रही है। परन्तु यह सिद्धान्त मान्य नहीं है क्योंकि इसमें शक्ति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

2) शक्तिमें विकार होने पर भी शक्ति वैसी ही रही और दूसरी वस्तु भी बन गई। यही सिद्धान्त मान्य है। शक्तिपरिणामवादके उदाहरण →

(i) मकड़ी जाल बुनती है और फिर उस जालको निगल लेती है। ऐसा करने पर मकड़ी का आकार घटता या बढ़ता नहीं है, वह अपरिवर्तित रहता है।

ii) स्यमन्तक मणि रोज 40 मन सोना देती थी फिर भी उसका आकार अपरिवर्तित रहता था।

iii) चिन्तामणि से अनेक रत्न उत्पन्न होते हैं परन्तु वह स्वयं अपरिवर्तित रहती है।

Ques → ब्रह्मकी इच्छा से शक्ति में विकार हुआ, ब्रह्मकी इच्छा होना भी तो विकार है ?

Ans → जीव की इच्छा अन्य वस्तुके संस्पर्श से होती है अर्थात् जीवको इच्छाकरनेके लिये किसी अन्य वस्तु का होना आवश्यक है। जीव कभी भी उस वस्तुकी इच्छा नहीं कर सकता जो उसने कभी भी देखी या सुनी न हो।
जीवकी इच्छा अन्य वस्तु पर निर्भर होने के कारण ही इसको विकार कहते हैं।

ब्रह्मकी निरंकुश इच्छा ब्रह्मका स्वरूप लक्षण है, ब्रह्मकी इच्छा किसी अन्य वस्तु पर निर्भर नहीं होती इसलिये इसको विकार नहीं कहा जा सकता।

Ques) मायावाद क्या है? यह कितने प्रकार का होता है?

Ans) पद्मपुराण के अनुसार →

मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नबौद्धमुच्यते
मयैव विहितं देवि कलौ ब्राह्मणमूर्तिना। (उत्तरखण्ड → 43/6)

महादेवने देवि पार्वतीसे कहा → मायावाद अत्यन्त असत् शास्त्र है। यह वैदिक वाणीकी आड़ में प्रच्छन्न रूपसे आर्योंके धर्ममें प्रवेश कर गया है। मैं कलिकालमें ब्राह्मण मूर्ति धारणकर इसका प्रचार करूँगा।

मायावाद विवर्त —
- ब्रह्म का जीव भ्रम द्वारा जीवत्व
- ब्रह्मका प्रतिबिंब होकर जीवत्व
- स्वप्नमें ब्रह्मसे पृथक् जीव और जड़ जगतकी ब्रह्मसे अतिरिक्त प्रतीति

मायावाद के विचार → (1) शुद्ध अवस्थामें (मुक्त अवस्था) जीव और भगवान दोनों ब्रह्म हैं। जीव ब्रह्म है, मायाके कारण जीव और ब्रह्ममें भेद प्रतीत होता है, मायामुक्त होते ही जीव ब्रह्म बन जाता है।

2) भगवान जब इस जड़ जगतमें आते हैं तो उन्हें मायाका आश्रय लेना पड़ता है। वे मायिक स्वरूप ग्रहण किये बिना जगतमें अवतीर्ण नहीं हो सकते। ब्रह्म अवस्थामें वे निराकार हैं परन्तु ईश्वर अवस्थामें उनका मायिक शरीर युक्त आकार है। वे इस जगतमें आकर बड़े-2 कार्य करते हैं और मायिक शरीरको इस जगतमें रखकर स्वधाम गमन करते हैं।

(3) ब्रह्मको माया जब अविद्यावृत्ति से बलपूर्वक ग्रसित करती है तब वह जीव कहलाता है। जीव कर्मके अधीन होता है इसलिये जीवकी इच्छा न होने पर भी वह जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि के द्वारा ग्रसित है।

(4) ईश्वर मायाकी विद्या वृत्तिका आश्रय लेकर स्वेच्छासे मायिक नाम, रूप, उपाधि आदि ग्रहण करते हैं इसलिये वे कर्मके अधीन नहीं हैं और स्वेच्छापूर्वक इन सबका

त्यागकर अपने धाम वापस जा सकते हैं।

Ques) मायावाद के 4 महावाक्य कौनसे हैं?

Ans→ ① सर्वं खल्विदं ब्रह्म - समस्त जगत ब्रह्म है (छा० उ० → 3/14/1)
नेहनास्ति किञ्चन → (कठ → 2/1/11) → ब्रह्ममें किसी प्रकार का नानात्व नहीं है।

② प्रज्ञानं ब्रह्म (ऐत० → 5/3) → प्रज्ञान ही ब्रह्म है।

③ तत्वमसि श्वेतकेतो (छा० उ० → 6/8/7) → हे श्वेतकेतो तुम वही हो।

④ अहं ब्रह्मास्मि (बृ० उ० → 1/4/10) → मैं ब्रह्म हूँ।

** ये 4 महावाक्य हैं, ऐसा वेदों में कहीं वर्णन नहीं है। प्रणव (ॐ) ही एकमात्र महावाक्य है। गीता में भगवानने स्वयं कहा है → "प्रणव: सर्ववेदेषु" अर्थात् समस्त वेदों में मैं "ॐ" हूँ।
अत: ये 4 महावाक्य न होकर प्रादेशिक वाक्य हैं। प्रत्येक उपनिषद के प्रत्येक मंत्र का पृथक-2 विचारकर फिर उनकी एक साथ विवेचना करनेपर ही वेदके यथार्थ अर्थको जान सकते हैं। प्रादेशिक वाक्योंको लेकर खींचातानी करने से कुमत का ही प्रकाश होगा। वेदों में जो कुछ कहा है वह सत्य है परन्तु हमारी बुद्धि उसका सम्यक् अर्थ समझने में असमर्थ है।

Ques) अचिन्त्य महादेव परम वैष्णव हैं फिर उन्होंने मायावाद (असत् मत) का प्रचार क्यों किया?

Ans→ "जब असुरों ने भक्तिमार्ग का आश्रय लेकर, सकाम भाव से अपने दुष्ट उद्देश्यों को पूर्ण करना शुरु कर दिया तब भक्तवत्सल भगवान ने सोचा कि असुर भक्तिपथ को भ्रष्ट कर भक्तों को कष्ट दे रहे हैं। इसलिये भक्तिमार्ग को असुरों से बचाना चाहिए तब भगवानने महादेव को बुलाकर कहा → "हे शिव! तुम दैत्योंको मोहित करने के लिये ऐसे शास्त्र का प्रचार करो जो मुझे असुरों से गोपनीय रखे। आसुरी प्रवृत्ति के लोग भक्तिपथ त्यागकर उस मायावाद शास्त्र का आश्रय ग्रहण

करेंगे तथा भक्तजन बिना किसी बाधाके शुद्ध भक्तिपथ का आस्वादन करेंगे।"
परम वैष्णव महादेवने दुःखपूर्वक भगवानकी आज्ञा मानकर उनका यह मनोभीष्ट पूर्ण किया इसमें शिवजी का क्या दोष है?
इसलिये शुद्ध वैष्णव मायावादके प्रचारक शंकरके अवतार शंकराचार्य का दोष नहीं देखते। पद्मपुराण में भगवान विष्णुने कहा है →

त्वमाराध्य तथा शंभो ग्रहिष्यामि वरं सदा
द्वापरादौ युगे भूत्वा कलया मानुषादिषु।
स्वागमैः कल्पितैस्त्वञ्च जनान् मद्विमुखान् कुरु
माञ्च गोपय येन स्यात् सृष्टिरेषोत्तरोत्तरा। (उत्तरखण्ड→ 42/109-110)

हे शम्भो! स्वयं भगवान होकर भी मैंने जिस प्रकार असुरों को मोहित करनेके लिये दूसरे देवी-देवताओं की आराधना की है, उसी प्रकार तुम्हारी भी आराधना करके मैं वर प्राप्त करूँगा। तुम कलियुगमें मनुष्योंके बीचमें अवतीर्ण होकर एक कल्पित मत का प्रचारकर असुर लोगों को मुझसे विमुख कर दो।

वराह पुराण में भगवान ने शिवजी से कहा →

एष मोहं सृजाम्याशु यो जनान् मोहयिष्यति
त्वञ्च रुद्र महाबाहो मोहशास्त्राणि कारय।
अतथ्यानि वितथ्यानि दर्शयस्व महाभुज
प्रकाशं कुरु चात्मानमप्रकाशञ्च मां कुरु।

मैं ऐसे मोह की सृष्टि कर रहा हूँ जो लोगोंको मोहित करेगा। हे रुद्र! तुमभी एक ऐसे मोह-शास्त्रकी रचना करो। अतथ्य को तथ्य और तथ्य को अतथ्य रूपमें प्रकाशित करो। अपने स्वरूप का प्रकाश करो और मेरे भगवत्-स्वरूपको आवृत करो।

Ques: अचिन्त्य भेदाभेद तत्व क्या है?
Ans: कृष्णके साथ उनकी जीव शक्तिका और जीवशक्तिसे उत्पन्न जीवों का एक साथ भेद-अभेद दोनों है। यह भेदाभेद तत्व जड़ बुद्धि से परे होनेके कारण 'अचिन्त्य' कहलाता है।



ईश्वर और जीव में भेद → (स्वभाव और स्वरूप की दृष्टि से)

1) ईश्वर सर्वशक्तिमान हैं अत: उनमें समस्त गुण पूर्ण मात्रामे हैं। जीव अणु चित् है अत: उसमें समस्त गुण अणु मात्रामें हैं।
2) ईश्वर चित शक्ति, जीव शक्ति और माया शक्तिके अधीश्वर हैं, शक्ति उनकी दासी है जबकि जीव शक्तिके वश में है।
3) ईश्वर विभू हैं, जीव क्षुद्र है।
4) ईश्वर पूर्ण स्वतन्त्र हैं, जीव भगवत-परतन्त्र- स्वतन्त्र हैं। उदा० → जिस प्रकार रस्सी से बंधी गाय रस्सीकी लम्बाई तक ही स्वतन्त्र रहती है।
5) ईश्वर सेव्य हैं, जीव कृष्णका दास है।

ईश्वर और जीवमें अभेद →(चित् तत्व की दृष्टि से)

1) दोनों ही ज्ञान स्वरूप, ज्ञाता स्वरूप, क्षेत्रज्ञ और इच्छामय हैं।
2) दोनों चिन्मय हैं।

कृष्णके साथ जीव का चित् धर्मकी दृष्टिसे अभेद है और स्वरूपत: दोनोंमें नित्य भेद है। उदा० → सोने के टुकड़े से कंगन बनाया। गुण की दृष्टि से (स्वर्णके गुण) टुकड़ा और कंगन दोनों समान हैं परन्तु स्वरूप (आकृति) की दृष्टिसे दोनोंमें भेद है। कंगनको हाथमें पहनते हैं परन्तु सोनेको नहीं।
इसी प्रकार जीव का कृष्णके साथ नित्य भेद और नित्य अभेद दोनों हैं, परन्तु जहां नित्य भेद और अभेद दोनों होते हैं, वहां नित्य भेदकी प्रतीति ही प्रबल होती है।

** केवल भेद या केवल अभेद मानने से 'सेवा' सम्भव नहीं है।
1) यदि केवल भेद माना जाये तो जीव और भगवान दोनों स्वतन्त्र हो गये। स्वतन्त्र सत्ता होने से न कोई सेवक रहा और न कोई सेव्य अत: कौन किसकी सेवा करेगा।

2) केवल अभेद माना जाये तो सिर्फ एक ही वस्तु रह गई जबकि सेवाके लिये 2 लोग होने चाहिए एक सेवा करने वाला (सेवक) और दूसरा जिसकी सेवा की जाये (सेव्य)।

इसलिये 'अचिन्त्य भेदाभेद तत्व' स्वीकार किये बिना सेवा सम्भव नहीं

है। इसको स्वीकार करने पर ही जीव और भगवान में "भेद-प्रतीति" नित्य सिद्ध होती है और भेद-प्रतीतिके बिना जीवों का परम प्रयोजन "प्रीति" सिद्ध नहीं हो सकता।

Ques) 'प्रीति' ही जीवों का परम प्रयोजन है इसका क्या प्रमाण है?

Ans) प्रत्येक जीव प्रीति (आनंद) के लिये चेष्टा करता है। कर्मी विषय भोगमें आनन्द अनुभव करता है, मुमुक्षु व्यक्ति मोक्ष को आनंद मानते हैं और भक्त कृष्ण-सेवानन्द प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार सभी लोग प्रीतिके लिये ही प्रयत्नशील हैं। परन्तु कर्मी, ज्ञानी का आनंद नित्य नहीं होता क्योंकि →

1) कर्म करनेसे स्वर्गादि प्राप्त होते हैं जो अनित्य हैं अतः आनंद भी अनित्य है।
2) ज्ञानी ब्रह्मनिर्वाणमें आनंद की कामना करते हैं जोकि उनका भ्रम है क्योंकि मुक्ति होने पर "मैं" का अस्तित्व नहीं रहता, वह ब्रह्म बन जाता है तो सुख अनुभव कौन करेगा? "मैं" के साथ "मेरा" भी समाप्त हो गया और जब 'मेरा' ही नहीं रहा तो सुख किससे अनुभव करेगा? (क्योंकि आनंदके लिये किसी दूसरी वस्तु की आवश्यकता होती है)

* भक्ति में ही एकमात्र प्रयोजन सिद्धि 'प्रीति' होती है। भक्तिकी चरम अवस्था प्रीति है। और यही प्रीति नित्य है क्योंकि शुद्ध जीव नित्य है, कृष्ण भी नित्य हैं अतः दोनोंके बीच प्रीति भी नित्य है।

अतः अचिन्त्य भेदाभेद तत्व स्वीकार करने से ही प्रेमकी नित्यता सिद्ध होती है।

अध्याय - 19

प्रमेय के अन्तर्गत अभिधेय विचार

दशमूल - 9

श्रुति : कृष्णाख्यानं स्मरणनतिपूजाविधिगणा :
तथा दास्यं सख्यं परिचरणमप्यात्मददनम्
नवाङ्गान्येतानीह विधिगतभक्तेरनुदिनं
भजन् श्रद्धायुक्त : सुविमलरतिं वै स लभते ।

श्रवण, कीर्तन, स्मरण, वन्दन, पादसेवन, अर्चन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन इस नवधा वैधी भक्ति का जो लोग श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन अनुशीलन करते हैं, वे विमल कृष्ण प्रेम प्राप्त करते हैं।

Ques) स्मरण कितने प्रकार का होता है ?

Ans) स्मरण –
- स्मरण (देखी, सुनी या अनुभवकी बातको फिर से मनन करना
- धारणा (विषयों से चित्त को खींचकर, मन में किसी विशेष विषयको धारण करना
- ध्यान (रूप आदि का विशेष रूप से चिन्तन करना
- ध्रुवानुस्मृति (तैल धारावत निरन्तर अविच्छिन्न ध्यान
- समाधि (ध्येय मात्र की स्फूर्ति

Ques) प्रयोजन प्राप्ति का क्या उपाय है ?

Ans) ज्ञान और कर्मसे शून्य भक्ति ही जीवोंका परम प्रयोजन है और वही प्रयोजन सिद्धि का उपाय भी है। साधन अवस्थामें उसे साधन भक्ति और सिद्ध अवस्थामें उसे प्रेम भक्ति कहते हैं

अन्याभिलाषिता शून्यम् ज्ञानकर्माद्यनावृतम्
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनम् भक्तिरुत्तमा ।

Ques) यदि भक्ति इतनी श्रेष्ठ है तो सभी लोग भक्ति प्राप्त करनेके लिये प्रयास क्यों नहीं करते ?

Ans) मानव बुद्धि जड़ और सीमित है वह चिन्मय और असीम भक्ति तक नहीं पहुँच सकती । पूर्व संचित सुकृतिके प्रभावसे ही जिनके हृदयमें थोड़ी रुचि हो जाती है, वे ही भक्ति तत्वको समझ सकते हैं

Ques) वर्णाश्रम धर्म पालन करने वाले सभी लोग भक्ति क्यों नहीं करते ? क्या वर्णाश्रम धर्म वालों को अपने कर्तव्य और भक्ति अंग दोनों का पालन करना पड़ता है ?

Ans) अनेक जन्मोंकी सुकृतिके फलस्वरूप जिन लोगोंकी भक्तिमें श्रद्धा होती है उनकी वर्णाश्रम धर्ममें आसक्ति नहीं होती। ऐसे लोगोंका भक्तिमें अधिकार होता है। भक्ति अंग पालन करने से कर्तव्य पालन अपने आप हो जाता है। यदि भक्तसे दैववश कोई पाप हो जाये तो उसे प्रायश्चित करनेकी कोई आवश्यकता नहीं होती, भक्ति करनेसे सारे प्रायश्चित हो जाते हैं।

* गीता (18/66) के अनुसार जब अनन्य भक्तिके प्रति अधिकार उत्पन्न होता है तब ज्ञान और कर्म शास्त्रोंकी विधियोंका पालन करनेकी आवश्यकता नहीं होती। भक्तिसे ही सर्वसिद्धि हो जाती है।

Ques) समस्त शास्त्रोंको पढ़कर कलियुगके मनुष्यके लिये विधि-निषेध व वैध-धर्मका निर्णय करना असम्भव है। संक्षेपमें शास्त्रोंमें विधि-निषेधका क्या निर्णय है ?

Ans) स्मर्तव्यः सततं विष्णुर्विस्मर्तव्यो न जातुचित्
सर्वे विधिनिषेधाः स्युरेतयोरेव किङ्कराः। (पद्मपुराण - उत्तरखण्ड 42/103)
भगवान विष्णुको सदैव स्मरण रखो - यही मूल विधि है। समस्त वर्णाश्रम धर्मके नियम इसी विधिके अन्तर्गत हैं।
भगवानको कभी मत भूलो - यही मूल निषेध है। अनेक पाप और उनके प्रायश्चित इसी निषेधके अनुगत हैं।

Ques) नाम और मन्त्रमें क्या भेद है ?

Ans) भगवानके नाम ही मन्त्रके प्राण हैं। 'नाम' के प्रारम्भ में 'ॐ', 'ऐं', 'ह्रीं', 'क्लीं' आदि बीज लगाकर तथा अन्त में समर्पण सूचक 'स्वाहा' लगाकर ऋषियों ने मन्त्रों की रचना करके एक विशेष शक्ति का उद्घाटन किया है। इस मन्त्र के द्वारा भगवान से एक सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।
यद्यपि नाम ही निरपेक्ष तत्व है परन्तु बद्ध जीव की 'नाम' के प्रति श्रद्धा नहीं होती अतः ऋषि मुनियों ने मन्त्रों की रचना की और उनके जपके लिये विशेष नियम बनाये। 'नाम' करने के लिये कोई विधि-निषेध नहीं होता अतः बद्धजीव की 'नाम' के प्रति श्रद्धा नहीं रहती परन्तु 'मन्त्र' के जप में शुद्धि, देश, काल आदि का विचार होता है अतः बद्ध जीवों की चित्त शुद्धि के लिये ही मन्त्रों की रचना की गई।

* सिद्धि की अवस्था में मन्त्र की आवश्यकता नहीं रहती अतः केवल 'नाम' जप



ही किया जाता है।

* गुरुदेव शिष्यको दीक्षा देनेके समय चार दोषों → सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध, अरि का शोधन करनेके बाद ही दीक्षा प्रदान करते हैं, परन्तु अष्टादश अक्षर का मन्त्रराज (कृष्णमन्त्र) में इन दोषों की कोई अपेक्षा नहीं रहती।
त्रैलोक्य-सम्मोहन तन्त्रमें महादेवने कहा है →
अष्टादशाक्षर मन्त्रमधिकृत्य श्रीशिवेनोक्तम्
न चात्र शात्रवा दोषा वर्णाष्वादि - विचारणा।

बृहद्गौतमीय तन्त्रके अनुसार →
सिद्ध - साध्य - सुसिद्धारि - रूपा नात्र विचारणा
सर्वेषां सिद्ध - मन्त्रानां यतो ब्रह्माक्षरो मनुः।
अर्थात् कृष्ण मन्त्र का प्रत्येक अक्षर ही ब्रह्म है अतः इस मन्त्रमें 4 दोषों का विचार नहीं है।

* श्रीचैतन्य चरितामृत के अनुसार → नाम ही समस्त मन्त्रोंका सार है।
कृष्णमन्त्र हैते हबे संसार- मोचन
कृष्णनाम हैते पाबे कृष्णेर चरण।
नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म
सर्वमन्त्रसार नाम, - एई शास्त्रमर्म। (चै० च० आ० → 7/72-74)

अध्याय - २०

प्रमेय के अन्तर्गत अभिधेय तत्व का विचार - वैध साधन भक्ति

Ques) पंचांग भक्ति के कौन से अङ्ग हैं?
Ans) (1) श्रद्धापूर्वक श्री विग्रह की सेवा (2) रसिक भक्तों के साथ श्रीमद्भागवत का आस्वादन करना (3) श्रेष्ठ साधु-सन्तों का संग (4) श्रीनाम संकीर्तन (5) मथुरा आदि भगद्धामों में वास

Ques) साधु मार्ग का अनुसरण किसे कहते हैं?
Ans) जिस किसी उपायसे कृष्णमें मन लगाया जाये, उसे साधन भक्ति तो कह सकते हैं परन्तु पूर्व महाजन जिस मार्गका अनुसरण करके गये हैं, उसी मार्गका अनुसरण करना कर्तव्य है। इसका कारण यह है कि वह मार्ग सर्वदा दुःखरहित, श्रमरहित, और समस्त कल्याणका हेतु होता है।

स मृग्यः श्रेयसां हेतुः पन्थाः सन्तापवर्जितः
अनवाप्तश्रमं पूर्वे येन सन्तः प्रतस्थिरे। (स्कन्द पुराण)

पूर्व महाजनोंने जिस मार्गको अत्यन्त सुलभ अर्थात् श्रमरहित जानकर ग्रहण किया है वही पथ कल्याण प्राप्ति के लिये सन्तापरहित है अतः एकमात्र वही पथ ग्रहण करने योग्य है।

* कोई भी पथ किसी एक व्यक्ति द्वारा सुन्दर ढंग से निरुपित नहीं होता, पूर्व महाजनोंने एकके बाद दूसरेने क्रमशः उस भक्ति पथ की छोटी-मोटी समस्त विघ्न-बाधाओंको दूरकर उसे सहज और निर्भय बनाया है। इसलिये उस मार्ग का अवलम्बन करना ही कर्तव्य है। पूर्व महाजनों द्वारा दिये पथ को त्यागकर श्रीहरिकी यदि एकान्तिकी भक्ति भी की जाये तो उससे भी कल्याण नहीं हो सकता, उससे भी उत्पात होते हैं?

Ques) हरिके प्रति अनन्या भक्ति उत्पातका कारण कैसे हो सकती है?
Ans) श्रुति स्मृति पुराणादि पञ्चरात्र विधिं बिना
ऐकान्तिकी हरेर्भक्तिरुत्पातायैव कल्पते। (ब्रह्मयामल)

पूर्व महाजन पथ को छोड़कर किसी दूसरे पथकी सृष्टि करनेसे एकान्तिक भाव प्राप्त नहीं होता। विधिमार्गके अधिकारी साधकोंको ध्रुव, प्रह्लाद, नारद, व्यास और शुक आदि महाजनों द्वारा निर्दिष्ट भक्तिपथका



अवलम्बन करना आवश्यक है। रागमार्ग में श्रुति, स्मृति, पुराणादि की विधियों की अपेक्षा नहीं रहती, उसमें केवल व्रजवासीजनों के अनुगमन की अपेक्षा रहती है।

* दत्तात्रेय, बुद्ध आदि ने शुद्ध भक्ति को न समझकर उसके भावाभास को ग्रहणकर मायावाद और नास्तिक पन्थों का प्रचार किया और उसमें हरिभक्ति का आरोप किया परन्तु उनके द्वारा प्रवर्तित पथ हरिभक्ति नहीं बल्कि उत्पात-विशेष है।

Ques) जीवन निर्वाह उपयोगी विषय ग्रहण करने का क्या तात्पर्य है?

Ans) यावता स्यात् स्वनिर्वाहः स्वीकुर्यात्तावदर्थवित्
आधिक्ये न्यूनतायां च च्यवते परमार्थतः। (नारदीय पुराण)

जिस मात्रा में धन आदि ग्रहण करने से आपकी भक्ति और जीवन निर्वाह हो, उसी मात्रा में ग्रहण करना चाहिए क्योंकि आवश्यकता से अधिक या अल्प ग्रहण करने से परमार्थ से भ्रष्ट होना पड़ता है।

* आवश्यकता से अधिक ग्रहण करने से आसक्ति और कम ग्रहण करने से अभाव के कारण भजन में बाधा आती है अतः निरपेक्ष होने तक जीवन निर्वाह सम्बन्धी वस्तुओं को ग्रहणकर भजन करना चाहिए।

Ques→ सङ्ग किसे कहते हैं?

Ans→ "सङ्ग" शब्द से आसक्ति का बोध होता है। दूसरे लोगों से निकटता अथवा बातचीत को 'सङ्ग' नहीं कहते, जब उस निकटता अथवा बातचीत में आसक्ति होती है उसे 'सङ्ग' कहते हैं। जब तक भाव उदित न हो, तब तक भक्ति विरोधी सङ्ग परित्याग करना आवश्यक है। कृष्ण-विमुख लोगों के सङ्ग से भक्तिलता भी सूख जाती है।

Ques→ कृष्ण विमुख कौन हैं?

Ans→ कृष्णभक्ति रहित भोगों में आसक्त विषयी, स्त्री सङ्ग में आसक्त, मायावादी, नास्तिक - ये चार प्रकार के लोग कृष्ण-विमुख हैं।

Ques) 'अहंता' और 'ममता' क्या हैं?

Ans) शरीर के भीतर स्थित जीवात्मा को देही कहते हैं। इस जीव के प्रति जो "मैं" की बुद्धि होती है उसको देह-निष्ठ 'अहंता' कहते हैं। शरीर के प्रति जो 'मेरा' की बुद्धि होती है उसको देह-निष्ठ 'ममता' कहते हैं।



* 'मैं' और 'मेरा' इस बुद्धिको छोड़कर 'मैं कृष्ण का दास हूँ' और यह शरीर कृष्णकी सेवाका उपयोगी एक यन्त्र है - इस बुद्धिसे शरीर का निर्वाह करना ही आत्मनिवेदन है।

* भक्तिके अंगोंका मुख्य फल कृष्ण प्रेम है परन्तु कभी-२ शास्त्रोंमें जो इनके अवांतर फलों का वर्णन देखा जाता है, वह कृष्ण-बहिर्मुख लोगोंमें भजनके प्रति रुचि उत्पन्न करने के लिये है। ज्ञान और वैराग्य भक्ति के अंग नहीं हैं क्योंकि ये चित्तको कठोर बना देते हैं जबकि भक्ति सुकोमल स्वभाव की होती है। भक्तिके द्वारा जो ज्ञान और वैराग्य स्वतः उत्पन्न होते हैं, वे ही स्वीकार्य हैं।

① चण्डी की एक बार, सूर्य की 7, गणेश की 3, केशव की 4 एवं महेश की आधी परिक्रमा करनी चाहिए। (नृसिंह पुराण)

② 4 बार विष्णु मन्दिर प्रदक्षिणा के द्वारा विश्व-ब्रह्माण्ड की प्रदक्षिणा हो जाती है और इसका फल तीर्थगमन से श्रेष्ठ है। (वराह पुराण - चतुर्मास माहात्म्य) 4 प्रदक्षिणा करने वाला हंसों से युक्त रथ पर वैकुण्ठ जाता है

③ 3 बार हरिमन्दिर प्रदक्षिणा करने वाला समस्त पापों से मुक्त होकर देवेन्द्र पद प्राप्त कर लेता है। (बृहन्नारदीय पुराण - यम-भागीरथ संवाद)

④ एक हाथ से विष्णु-प्रणाम, केवल एक बार हरिमन्दिर प्रदक्षिणा, निषिद्ध काल में विग्रह दर्शन (श्रृंगार, भोग आदि के समय, श्रृंगार रहित, वंशी रहित) नहीं करना चाहिए इससे प्राक्तन सुकृति नष्ट हो जाती है। विग्रह के सामने गोल-२ नहीं घूमना चाहिए इससे भगवान को पीठ दिखाना होता है। (विष्णु-स्मृति

अष्ट सिद्धि → ① अणिमा → अणु सूक्ष्म रूप धारण करना

② महिमा → विराट रूप धारण करना

③ लघिमा → हवा, रुई के समान शरीर हल्का करना, हवा में 1 मिनट में हजारों मील जा सकता है। आकाश में उड़ सकता है

④ गरिमा → पर्वत के समान भारी होना

⑤ प्राप्ति → पृथ्वी पर रहकर सूर्य, चन्द्र को छू सकता है। भविष्य बताना, दिव्य दृष्टि, कहीं की भी बात सुन लेना, मानसिक संदेश देना, मन की बात जानना, पशु-पक्षी की भाषा समझना, कोई भी भाषा समझना, किसी भी रोग का इलाज

⑥ प्राकाम्य → जल में रहना (सौभरि ऋषि), अदृश्य होना, दूसरे के शरीर में प्रवेश करना (शंकराचार्य ने राजा अमरुक के शरीर में प्रवेश किया।) युवा बने रहना (राजा ययाति)

⑦ वशित्व → किसी को भी वश में कर लेना

⑧ ईशित्व → मरे को जीवित कर देना, ब्रह्माण्ड का देवता बनना (विश्वामित्र ने त्रिशंकु के लिये नये स्वर्ग का निर्माण किया)

नवनिधि (कुबेर के पास) → महापद्म (हीरे-मोती की झील), पद्म, मकर (काले रंग की चमकीली धातु), शंख, नीलम, कच्छप, कुंद, मुकुंद, खर्व।

* 7 मोक्षदायिनी पुरी → अयोध्या, मथुरा, गया, काशी, काञ्ची, अवन्तिका, द्वारका।

सम्प्रदाय	आचार्य	उपास्य विग्रह	वेदान्त भाष्य	मत
श्री	रामानुजाचार्य	लक्ष्मी-नारायण	श्री भाष्य	विशिष्ट अद्वैतवाद
ब्रह्म	मध्वाचार्य	गोपाल	अणु भाष्य, अणु व्याख्यान	द्वैतवाद
रुद्र	विष्णुस्वामी	लक्ष्मी नृसिंह	सर्वज्ञ सूक्त	शुद्ध अद्वैतवाद
चतु:सन (सनक)	निम्बादित्य	रुक्मिणी-द्वारिकाधीश	पारिजात सौरभ	द्वैत-अद्वैतवाद

सृष्टि तत्व (Creation of Universe)

When mahavishnu wants to create the universe, then he glances at maya. Maya is inactive but glance (sight) of vishnu is transcendental; so maya gets active and is stimulated by the glance. Then there is disturbance in the 3 modes of Prakriti (mode of Passion, goodness & ignorance) as a result, first element is created called Mahat Tattva.

① महत् तत्व (Mahat Tattva)
↓
② अहंकार (False ego)
↓

③ सात्विक अहंकार (Satvika or vaikarika ego)
↓
मन और इन्द्रियों के देवता (Mind and demigods which control our senses)

④ राजसिक अहंकार (Rajasika or Taijasa) ego
↓
- 5 ज्ञानेन्द्रियाँ (Knowledge senses): चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा — eyes, ear, nose, tongue, skin
- 5 कर्मेन्द्रियाँ (working senses): वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ — speech, hands, feet, Anus, genital

⑤ तामसिक अहंकार (Tamasika) ego
↓
- 5 महाभूत (Gross elements): आकाश (space), वायु (air), जल (water), अग्नि (Fire), पृथ्वी (earth)
- 5 तन्मात्रा (sense objects): शब्द (sound), स्पर्श (touch), रूप (form), रस (taste), गंध (smell)

⑥ अज्ञान (~~Illusion~~) Ignorance

These 6 elements were created by maya so it is called 'Mayik creation'

Elements 7 to 10 were created by Brahma, therefore it is called 'vairaj creation'. 'Vairaj' is another name of 'Brahma'.

(7) स्थावर (Sthavar or non-moving objects) → वृक्ष (trees), पर्वत (Mountain)
(8) तिर्यक (Tiryaka) → पशु (animals), पक्षी (Birds), कीट-पतंगा (Insects)
(9) मनुष्य (Human Being)
(10) देवता (Demi God)
उभय सृष्टि (Ubhaya Srsti) → नारद (Narada), चतुःसेन (Catuhsen

'आत्मा' शब्द के 7 अर्थ → ब्रह्म, देह, मन, यत्न, धृति, बुद्धि, स्वभाव
इन 7 वस्तुओं में जो रमण करता है, उसे 'आत्माराम' कहते हैं।

'मुनि' शब्द के 7 अर्थ → मननशील, मौनी, तपस्वी, व्रती, यति, ऋषि एवं मुनि

शुकदेव गोस्वामी की माता का नाम - वीटिका